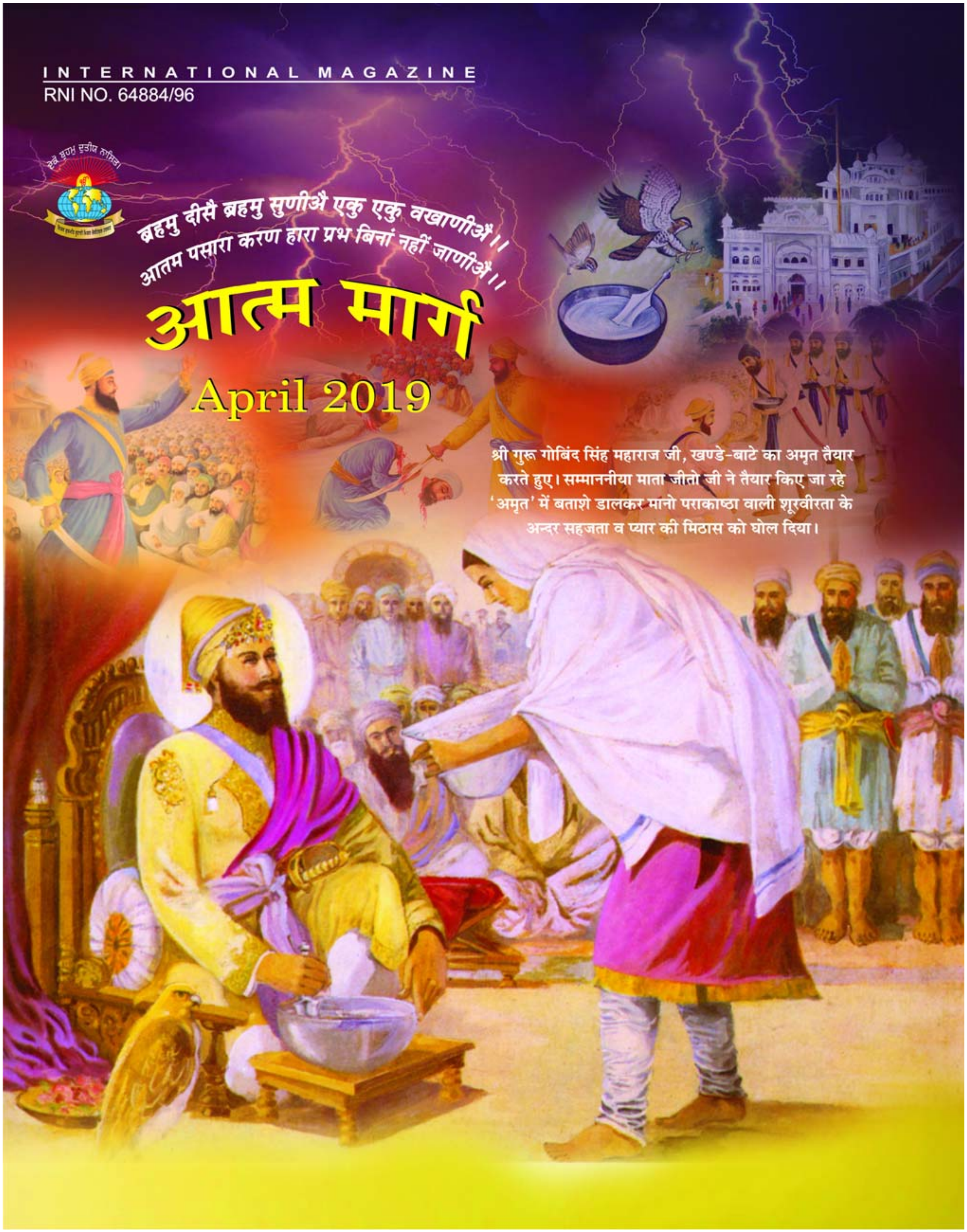
INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI NO. 64884/96
ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ ॥
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीऐ ॥
आत्म मार्ग
April 2019
श्री गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी, खण्डे-बाटे का अमृत तैयार करते हुए। सम्माननीया माता जीतो जी ने तैयार किए जा रहे 'अमृत' में बताशे डालकर मानो पराकाष्ठा वाली शूरवीरता के अन्दर सहजता व प्यार की मिठास को घोल दिया।

ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी जत्थे समेत आस्ट्रेलिया में गुरमति प्रचार करते हुए।

नीचे - कीर्तन का रसास्वादन करते हुए श्रद्धालुजन।

आत्म मार्ग

वर्ष चौबीसवां - अंक तीसरा, अप्रैल 2019

गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन	एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी	सन्त बाबा हरपाल सिंह जी
प्रबन्ध सम्पादक	**मुख्य सम्पादक**
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह	डा. जगजीत सिंह

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/- (For outstation cheques)	

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,

भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल **(PSEB)** अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर

98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय *भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह*	5
2. बारहमाहा *सन्त बाबा वरियाम सिंह जी*	7
3. बैशाखी *सन्त बाबा वरियाम सिंह जी*	14
4. जीवन मनोरथ *सन्त बाबा हरपाल सिंह जी*	34
5. नूरानी मिलाप - 10 *भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह*	39
6. वारां भाई गुरदास जी *डा. भाई बीर सिंह जी*	42
7. भाई नन्द लाल जी	45
8. गुरू नानक आगमन *डा. भाई बीर सिंह जी*	47
9. गुरू नानक देव जी की प्रमुख रचना 'आसा दी वार' *डा. जगजीत सिंह*	50
10. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार *डा. स्वामी राम जी*	53
11. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची	55

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

'आत्म मार्ग' के पथिकों या प्यारे पाठकगणों को यह भली भांति विदित है कि आत्म मार्ग मैगजीन अप्रैल 2019 को अपनी रूहानी यात्रा को तय करती हुई पच्चीसवें वर्ष में प्रवेश कर गई है। मनुष्य के सौ वर्ष की समय सीमा में पच्चीस वर्ष की उम्र वाले को पूर्ण युवा माना जाता है। इसलिए यदि इसी सन्दर्भ में विचार की जाए तो आत्म मार्ग इस समय अपनी पूरी युवावस्था में चल रही है, लेकिन वास्तविकता यह है कि आत्म मार्ग सदैव ही बुलन्दावस्था का मार्ग है जबकि शरीर की बनावट, उतराव तथा चढ़ाव वाला मार्ग है -

दस बालतणि बीस रवणि तीसा का सुंदरु कहावै ॥
चालीसी पुरु होइ पचासी पगु खिसै
सठी के बोढेपा आवै ॥
सतरि का मतिहीणु असीहाँ का विउहारु न पावै ॥
नवै का सिहजासणी मूलि न जाणै अप बलु ॥
ढंढोलिमु ढूढिमु डिठु मै नानक जगु धूए का धवलहरु॥
अंग - 138

बाल जुआनी अरु बिरधि फुनि तीनि अवसथा जानि॥
कहु नानक हरि भजन बिनु बिरथा सभ ही मानु॥
अंग - 1428

शरीर की अवस्थाएँ होती हैं। पहले यह जन्म लेता है, फिर बचपन आता है, फिर जवान होता है तथा अन्त में बुढ़ापा आता है। यहीं बस नहीं अपितु बुढ़ापे का तो प्रत्येक कदम मृत्यु की तरफ ही बढ़ रहा होता है, जबकि दूसरी तरफ आत्मा न तो जन्म लेती है, न वृद्ध होती है और न ही कभी मरती है क्योंकि यह तो परमात्मा का अंश है। आत्मा का मार्ग इन समय-सीमाओं के अन्दर बँधा हुआ नहीं होता है। शरीर एक रथ की तरह से है जो कि साधन तो है लेकिन साध्य या मंजिल नहीं। जैसे कि गुरवाणी का फुरमान है -

नानक सो प्रभु सिमरीऐ तिसु देही कउ पालि ॥
अंग - 554

आत्म मार्ग विगत चौबीस वर्षों से एक विशेष गुरमति सिद्धान्त का निरूपण कर रहा है जो कि इस जीव का मंजिल-ए-मकसूद है। पड़ाव-दर-पड़ाव उस मंजिल का अन्तिम छोर या टिकाना ढूँढने व बताने की कोशिश जारी है। प्यारे महापुरुषों (ब्रह्मलीन सन्त बाबा वरियाम सिंह जी) का यह ख्याल काफी लम्बे समय से था कि एक इस प्रकार की मासिक पत्रिका निकाली जाए जिसमें कि रूहानियत की शिक्षा प्रदान की जा सके, भावार्थ जिज्ञासुजनों को नर्सरी कक्षा से लेकर पी.एच.डी. तक की शिक्षा प्रदान की जा सके। दरअस्ल इस ख्याल के पीछे एक बहुत बड़ी सोच व शक्ति कार्य कर रही थी। यह सोच और शक्ति सन्त बाबा ईशर सिंह जी, राड़ा साहिब वालों की थी। किसी समय सन् 1975 ई. से पहले उन्होंने यह ख्याल प्रकट किया था कि कोई न कोई रूहानी पत्रिका निकाली जानी चाहिए लेकिन उनका यह भी ख्याल था कि इस कार्य को या तो सन्त वरियाम सिंह जी कर सकते हैं या फिर ज्ञानी मेहर सिंह जी। इसी श्रृंखला में ज्ञानी मेहर सिंह जी से सतगुरू जी ने सम्प्रदाय के महापुरुषों के जीवन लिखने की सेवा ली जबकि प्यारे महापुरुषों (सन्त वरियाम सिंह जी) से आपने रूहानी पत्रिका के संचालन की सेवा ली। सन्त बाबा ईशर सिंह जी का यह भी ख्याल था कि कीर्तन की फिल्में बनाकर गुरमति का प्रचार किया जाए। इस कार्य हेतु उन्होंने रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुषों को माया की पेशकश भी की लेकिन आप जी ने अपनी कमाई में ही बरकत डालने की अरदास करके अपनी निजी कमाई में से ही यह सेवा करने की वचनबद्धता प्रकट की। राड़ा साहिब वाले महापुरुषों के अनेकों भविष्य के वचन जहाँ एक ओर अनेकों कल्युगी जीवों के उद्धार का माध्यम बने वहीं पर उन्होंने उपयुक्त दोनों कार्यों की सेवा प्यारे महापुरुषों से ली। बड़ी-बड़ी बहुमंजली सांसारिक इमारतें जहाँ ऊँचाई के तौर पर आसमान को छूती हुई दिखाई पड़ती हैं, वहीं वे गहराई के तौर पर भी उतनी ही विशाल व मजबूत होती हैं। नीवों में पड़े हुए पदार्थों को विरले ही जानते होते हैं लेकिन ऊँचाइयाँ अधिकांश लोगों को दिखाई पड़ती हैं। इसी प्रकार से रूहानियत के पदचिन्ह व आत्मा का मार्ग भी उसी को दिखाई पड़ता है अथवा इस मार्ग की तलाश उसी को होती है, जिसे सतगुरू जी ने ज्ञान रूपी नेत्र प्रदान किए होते हैं।

यहाँ तक बात स्पष्ट हो गई है कि आत्म मार्ग पत्रिका प्रकाशित होने में समर्थ सतगुरू श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की कृपा, राड़ा साहिब वाले महापुरुषों का ख्याल व विचार एक शक्ति बन कर कार्य कर रही है। गुरू जी की कृपा प्राप्त

करने के लिए पात्रता आवश्यक है। अब कृपा के पात्र प्यारे महापुरुष रतवाड़ा साहिब वाले बने और काफी गहरी व दीर्घ विचार के बाद अप्रैल 1995 ई. की बैसाखी के पावन पर्व पर इस पत्रिका का प्रथम अंक संगत के हाथों में रूहानियत की सुगन्ध को बिखेरता हुआ पहुँचा। इसका प्रथम प्रकाशन सतगुरू श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के आगे अरदास के उपरान्त सम्माननीया बीजी (माता रणजीत कौर जी जीवन संगिनी, सन्त बाबा वरियाम सिंह जी) के कर कमलों द्वारा की गई। जयकारों की गूँज में हजारों-हजारों श्रद्धालुजनों ने इसे स्वीकृति प्रदान की। उपर्युक्त विचार का तात्पर्य यह है कि इस रूहानी गुलदस्ते का मुख्य कार्य इसकी नीवों में पड़ी हुई सुपर आत्माओं तथा सतगुरू सच्चे पातशाह जी की कृपाओं का वर्णन करना है।

समय-समय पर गुरू काल के अन्दर तथा बाद में सिक्ख इतिहास में गुरसिक्खों, गुरुमुख प्यारों, श्रद्धालुजनों तथा खालसा पन्थ ने अपने अधिकारों तथा उत्तरदायित्वों को पहचाना। जब भी छोटे या बड़े कार्य कौम या पन्थ में हुए तो संगत ने उसमें बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। यहाँ तक कि जरूरत पड़ने पर शहीदियाँ भी प्राप्त कीं। यह सब कुछ सतगुरू जी की कृपा तथा संगत के अन्दर गुरू-प्रेम वैराग्य तथा धर्म के लिए कुछ कर गुजरने तथा मर-मिटने के जज्बे के कारण ही सम्भव था। आज भी गुरू प्यार वाली आत्माएँ कौम व धर्म के लेखे अपना जीवन लगा रही हैं। जहाँ-जहाँ पर भी कोई गुरू प्यारा या गुरुमुखजन अपना जीवन यापन कर रहा है, वह वहीं पर 'आपि जपहु अवरा नामु जपावहु।।' के सिद्धान्त पर पहरा देने की अरदास करता है।

इस जज्बे के आधीन हजारों श्रद्धालुजन रतवाड़ा साहिब वाले प्यारे महापुरुषों द्वारा तथा संस्था द्वारा आरम्भ किए गए गुरमति प्रचार तथा परोपकारी कार्यों में अपना योगदान कर रहे हैं। रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के संस्थापक महापुरुषों तथा संस्था के सेवादारों का यह उसूल रहा है कि संस्था की तरफ से कभी भी कोई आर्थिक अपील नहीं की जाती है। यहाँ तक कि धार्मिक दीवानों की भेंट भी तय नहीं की जाती है। विदेशों में जाकर भी किसी भी गुरू घर से धनराशि युक्त सिरोपाओ नहीं लिया जाता है। ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के संस्थापक तथा वर्तमान महापुरुषों का यही उसूल रहा है। गुरू के लंगर, नि:शुल्क अस्पताल, नि:शुल्क सिलाई व कढ़ाई प्रशिक्षण केन्द्र तथा अन्य अनेकों परोपकारी कार्य गुरू जी के आशीर्वाद तथा संगत के प्यार भरे सहयोग के द्वारा चल रहे हैं।

उपुर्यक्त विचार करने का तात्पर्य यह है कि रतवाड़ा साहिब स्थान द्वारा कभी भी कोई धन सम्बन्धी अपील नहीं की जाती है। लेकिन यहाँ से एक अपील जरूर की जाती है 'आपि जपहु अवरा नामु जपावहु।।' गुरमति के अन्दर कोई पुजारी वर्ग नहीं है बल्कि यहाँ तो प्रत्येक सिक्ख मिशनरी है। गुरमति का प्रचार और प्रसार करना हम सबका दायित्व है। इसी संकल्प की पूर्ति दिन-रात धार्मिक दीवानों व आत्म मार्ग मैगजीन के माध्यम से की जा रही है यानि कि बोल कर व लिख कर गुरमति सिद्धान्तों का प्रचार रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट द्वारा किया जा रहा है। विगत चौबीस वर्षों से बहुत सारे गुरुमुख प्यारे आत्म मार्ग को घर-घर पहुँचाने तथा रिन्युवलों को एकत्र करने की सेवा निभा रहे हैं। ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब तथा आत्म मार्ग संस्था, उनके द्वारा निभाई जा रही सेवा की सराहना करता है और उनका सदैव ऋणी है। गुरू जी उनके ऊपर अपनी कृपा सदैव बनाए रखें ऐसी ट्रस्ट व आत्म मार्ग संस्था की अरदास है।

ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब तथा आत्म मार्ग संस्था के समस्त सुधी व सहृदय पाठकों को अपील है कि आत्म मार्ग के प्रचार और प्रसार में अधिकाधिक शारीरिक और मानसिक योगदान करके इसकी बुलन्दावस्था के लिए तत्पर हो जाएँ। इस सम्बन्ध में निवेदन है कि सन् 1995 ई. से सन् 2000 ई. तक जो लाइफ मेंबर बने थे उनकी लाइफ मैंबरशिप दोबारा **due** हो चुकी है। कृप्या मैगजीन का वितरण करने वाले सेवादार को या स्वयं अथवा बैंक/डाक के माध्यम से चैक अथवा ड्राफ्ट भेजकर इसकी रिन्युवल करवाने की कृपा करें। संस्था के साथ जुड़ा हुआ प्रत्येक पाठक अथवा गुरमति की समझ रखने वाला प्रेमीपुरुष कम से कम एक-एक अतिरिक्त लाइफ मैंबर तथा पाँच-पाँच सालाना मैंबर **adopt** करने का प्रण करें ताकि हम सब इसका और अधिक प्रसार करते हुए महापुरुषों के वचनों पर पहरा दे सकें ताकि उनके सपने साकार हो जाएँ। प्रस्तुत अंक में 'बैसाखी' के लेख को पढ़कर पाठकगणों को खूब रूहानी खुराक प्राप्त होगी कि दशमेश जी ने खालसा पन्थ का सृजन कैसे किया। आपने एक ऐसा महान आदर्श स्थापित किया जिसका सारा जीवन दूसरों के लिए ही है। खालसा आदर्श हमेशा ही संसार को सुख व शान्ति प्रदान करता रहा है और वर्तमान समय में भी कर रहा है। आत्म मार्ग संस्था, आप समस्त पाठकों व संगत के समक्ष अपनी बचनबद्धता प्रकट करती है कि इस मैगजीन के माध्यम से वह हमेशा ही खालसा आदर्श पर पहरा देते हुए आप जी की सेवा में हाजिर रहेगी। पच्चीसवें वर्ष में इस मैगजीन के प्रवेश करने पर यानि कि सिल्वर जुबली के अवसर पर मैं आप सबको मुबारकबाद देता हूँ। आत्म मार्ग की सारी सामग्री रूहानियत से भरपूर होती है। संस्था की सदैव ही यह कोशिश

(शेष पृष्ठ 38 पर)

बैसाख

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

वैसाखि धीरनि किउ वाढीआ जिना प्रेम विछोहु॥
हरि साजनु पुरखु विसारि कै लगी माइआ धोहु॥
पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु॥
पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु॥
इकसु हरि के नाम बिनु अगै लईअहि खोहि॥
दयु विसारि विगुचणा प्रभ बिनु अवरु न कोइ॥
प्रीतम चरणी जो लगे तिन की निरमल सोइ॥
नानक की प्रभ बेनती प्रभ मिलहु परापति होइ॥
वैसाखु सुहावा तां लगै जा संतु भेटै हरि सोइ॥
अंग - 133

पिछले चैत्र के महीने में किरत कर्म के बिछुड़े हुए जीव की पुकार सुनकर जो अनगिनत बार 84 के चक्करों में घूमता हुआ महान दुखों को प्राप्त करके अपनी हीनता को बताता हुआ, अपने दुखों से भरे अनुभवों को बताने के लिए बार-बार प्रार्थनाएं करता है कि हे प्रभु! मुझ पर कृपा करो, मेरा जीवन व्यर्थ बीत रहा है। मैं हर बार मनुष्य बनता रहा पर हर बार माया के चक्कर में पड़ जाता हूँ। गुरु के पास अरदास करता हूँ कि मुझे -

वैर बिरोध काम मोह॥
झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह॥
इआहू जुगति बिहाने कई जनम॥
नानक राखि लेहु आपन करि करम॥ अंग - 268

अब आप मुझे अपने पवित्र नाम का वरदान बख्शो। आपके मुखारबिंद से मैंने सुना है कि वाहिगुरु जी हर एक के साथ घट-घट में निवास करते हैं तथा उनका इसी शरीर में निश्चल स्थान है, जिसका स्वरूप सदा स्थिर है -

काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि॥
साचा वासा पुरि गगनंदरि॥
असथिरु थानु सदा निरमाइलु
आपे आपु उपाइदा॥
अंदरि कोट छजे हटनाले॥
आपे लेवै वसतु समाले॥
बजर कपाट जड़े जड़ि
जाणे गुर सबदी खोलाइदा॥
भीतरि कोट गुफा घर जाई॥
नउ घर थापे हुकमि रजाइ॥
दसबै पुरखु अलेखु अपारी
आपे अलखु लखाइदा॥ अंग - 1033

मैंने मनमुख होकर तेरा वचन श्रवण नहीं किया। मेरे पास ऐसे नेत्र नहीं जिसके द्वारा प्रभु के दर्शन हो जाएं। मैं तेरे प्यार से विरक्त रहकर क्षण भंगुर माया के सुखों में लगा हुआ हूँ। मैं काले लेख लिख रहा हूँ, जिसका फल भुगतना मुझे बहुत कठिन हो जायेगा। ऐसे मेरे जीवन में सुख नाम की कोई चीज आ ही नहीं सकती।

रतनु पदारथु पलरि तिआगै।।
मनमुखु अंधा दूजै भाइ लागै।।
जो बीजै सोई फलु पाए
सुपनै सुखु न पावणिआ।। अंग - 113

मेरा मन मैला है, मैं वाहिगुरु जी का ध्यान धरता रहा क्योंकि मुझे ज्ञान नहीं है इस बात का, यदि मैं कोई नेक कर्म भी करता हूँ तो मेरे अन्दर अभिमान पैदा हो जाता है तथा मेरे मन को हउमै की और मैल लग जाती है। मेरा जीवन एक मुर्दे के समान है जिसके बारे में आपका फरमान है -

धेनु दुधै ते बाहरी
कितै न आवै काम।।
जल बिनु साख कुमलावती
उपजहि नाही दाम।। *अंग - 133*

मेरी तो यह दशा है -

इहु मनु मैला इकु न धिआए।।
अंतरि मैलु लागी बहु दूजै भाए।।
तटि तीरथि दिसंतरि भवै अहंकारी
होरु वधेरै हउमै मलु लावणिआ।। *अंग - 116*

हे सतगुरु! मैंने तेरे महापुरुषों की संगत की और उन्होंने बताया कि यदि मेरे जैसा गुरु की शरण में आ जाये तो मेरे जैसे को प्राप्ति हो जाती है क्योंकि गुरु के पास अनेक उत्तम पदार्थ हैं। इस शरीर में तेरा नव निधि नाम बसता है जैसा कि फरमान है -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु॥
देही महि इस का बिस्रामु॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥ *अंग - 293*

हम बहुत ही अनजान हैं। आप जी ने फुरमान किया कि इस शरीर में नाम का भण्डार असीम रूप से विद्यमान है और इसी शरीर में अदृश्य व असीम परमात्मा निवास करता है जो कि स्वयं ही दृश्य व अदृश्य रूप में क्रिया कलाप करता है। जो लोग गुरु-शब्द द्वारा अपने अहंभाव को गंवा लेते हैं उनके अन्दर वह प्रकट हो जाता है। इस अमृत रूपी नाम, जो कि अत्यन्त मीठा रस है, के चहुँओर बज्र-कपाट है जिनके सम्बन्ध में स्वयं गुरू जी भी फुरमान करते हैं कि अहंभाव के समाप्त हो जाने से ये बज्र कपाट खुल जाते हैं तथा अमूल्य नाम गुरू जी की कृपा से प्राप्त हो जाता है। शब्द की कमाई के बिना नाम की प्राप्ति नहीं हो पाती है और गुरू की कृपा के द्वारा ही मन में नाम निवास करता है। जब हमारे अन्दर नाम बस गया, अहंभाव समाप्त हो गया, गुरू के ज्ञान का सुर्मा अपनी आन्तरिक आँखों में डाल लिया तो फिर अज्ञानता का अन्धकार दूर होकर प्रकाश हो जाता है तथा आत्मा, परमात्मा के अन्दर विलीन हो जाती है जैसे कि गुरू जी का फुरमान है -

इसु गुफा महि अखुट भंडारा।।
तिसु विचि वसै हरि अलख अपारा।।
आपे गुपतु परगटु है आपे
गुर सबदी आपु वंञावणिआ।।
हउ वारी जीउ वारी
अंम्रित नामु मंनि वसावणिआ।।
अंम्रित नामु महा रसु मीठा
गुरमती अंम्रितु पीआवणिआ।।
हउमै मारि बजर कपाट खुलाइआ।।
नामु अमोलकु गुर परसादी पाइआ।।
बिनु सबदै नामु न पाए कोई
गुर किरपा मंनि वसावणिआ।।
गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ।।
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ।।
जोती जोति मिली मनु मानिआ
हरि दरि सोभा पावणिआ।। *अंग - 124*

साधु संगत जी! किरत कर्म के वियोग के कारण हम अपने घर में रखी हुई वस्तु को पहचान नहीं सकते तथा 84 लाख योनियों के चक्कर काटते हैं। हम अपने अन्दर की खोज को छोड़कर बाहर माया के अन्दर भटकते फिरते हैं। यह तमाम हउमै की मैल के कारण हमारा व्यवहार है। जब तक हम ज्ञानेन्द्रियों, कर्मेन्द्रियों को संयम में नहीं लाते तब तक हमें कोई भी अन्तरीव ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता है। शबद के बिना हमारे अन्दर पूर्ण अन्धकार है। शबद का ज्ञान देने वाला सतगुर है जिस शबद की कठिन कमाई करते हुए हमारे हाथ में चाबी आ जाती है। जब हम इस चाबी के साथ अपने अन्दर चढ़ाई करते हैं तो हैरानी होती है कि जिसकी तलाश में करोड़ों जन्म बर्बाद कर देते हैं, वह तो मेरे अन्दर ही है और मैं निगुरा रह कर इस ज्ञान से वंचित रह गया हूँ, मैं गुरमुख की संगत न करके भटकता रहा। अब मुझे गुरमुख की संगत की महानता का पता चला है, उसके वचनों पर प्रतीति आई है। हे सतगुरु! तू कृपा करके मुझे उसके नाम की दात बख्श। शरीर के बाहर मैं प्रकृति के सुखों में से परम सुख को ढूंढ़ता रहा पर मेरे ज्ञान चक्षु न होने के कारण,

पता न चल सका कि यह वस्तु तो गुरमुख की कृपा से ही प्राप्त हुआ करती है, उसके पास अमूल्य वरदान नाम का है, फरमान है -

सरीरहु भालणि को बाहरि जाए।।
नामु न लहै बहुतु वेगारि दुखु पाए।।
मनमुख अंधे सूझै नाही
फिरि घिरि आइ गुरमुखि वथु पावणिआ।।
गुर परसादी सचा हरि पाए।।
मनि तनि वेखै हउमै मैलु जाए।।
बैसि सुथानि सद हरि गुण गावै
सचै सबदि समावणिआ।।
नउ दर ठाके धावतु रहाए।।
दसवै निज घरि वासा पाए।।
ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती
गुरमती सबदु सुणावणिआ।।
बिनु सबदै अंतरि आनेरा।।
न वसतु लहै न चूकै फेरा।।
सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरु खुलै नाही
गुरु पूरै भागि मिलावणिआ।। *अंग - 124*

इस प्रकार जिज्ञासु के प्रतीक के घर में से उठे विलाप को सुनकर पूरे सतगुरु ने बता दिया कि तेरी विरह का कारण तेरी अपनी ही भूल है, तूने परमेश्वर को भुला दिया तो इस हालत में 84 लाख यौनियों में चक्कर खाता रहा। चेत के मास को प्रतीक बनाकर गुरु महाराज जी ने बताया कि -

चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा।। अंग - 133

पर इस आनन्द की प्राप्ति का गुप्त भेद यह है कि गुरु से शबद प्राप्त करके रसना के साथ गुरुमन्त्र का जाप कर। गुरमुख द्वारा दिये गये शबद की कमाई करते हुये चैत का महीना बीत गया, अन्दर लगन लग गई। जिस में लगन और अधिक लगती है तथा आप इस विरहनि को मार्ग बताते हुए फरमान करते हैं कि जो माया के प्यार में लीन होकर वाहिगुरु जी को भूल चुके हैं, वाहिगुरु जी के प्रेम से कहीं अधिक माया के प्रेम को समझते हैं, वही ऐसे वियोग में पड़े हुए हैं उनके सामने माया की एक बहुत सख्त दीवार है, जो अन्दर वास करते प्रभु के साथ मेल नहीं होने देती। वह हरि जैसे परम प्यारे सज्जन को भूल कर माया के छल में आकर जिसमें सुख का नामोनिशां भी नहीं है, उसकी प्रीत में उलझ गये हैं। प्रत्यक्ष रूप में देख लो कि एक ओर वाहिगुरु जी हैं, दूसरी ओर स्त्री है, पुत्र है, धन है, अपना मान है, प्रभुता है, इनमें से कोई भी चीज शरीर छोड़ने के उपरान्त परलोक में साथ नहीं जाया करती। यहाँ तक भी है ये सारे सम्बंधी सुखों के सम्बंधी नहीं हैं, इनका प्यार झूठा प्यार है। ये जानते हुए भी वह इस प्रपंच में से नहीं निकल सकता। वाहिगुरु जी के साथ किंचित मात्र भी प्यार नहीं है। वाहिगुरु जी जीवों के चित्त में आता ही नहीं है। उसका कभी भी अभाव नहीं होता, वह सदा ही सभी को प्रेम दृष्टि से देखता है। उनकी आवश्यकताएं पूर्ण करता है तथा बिना मांगे अनगिनत वरदानों की वर्षा सदा ही करता रहता है।

दिव्य रसना द्वारा हम सभी रसों से श्रेष्ठतम रस जिसे नाम रस कहा जाता है उसका स्वाद अनुभव कर सकते हैं। उस महान प्रभु को अपने अन्दर से ही तलाश करके केवल हम स्वयं ही जन्म मरण के चक्कर से नहीं छूटते परन्तु अनेक ही जीवों को छुड़वा सकते हैं जैसा कि फुरमान है-

जिनि नामु धिआइआ
गए मसकति घालि।।
नानक ते मुख उजले
केती छुटी नालि।। *अंग - 8*

सो स्वयं ही विचार कर देख लेना कि एक तरफ तो माया के क्षण भंगुर सुख हैं, जिनके अन्दर दुःख ही दुःख है, जैसा कि फुरमान है -

सुन्दर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे॥
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे॥
मन इछे सुख मणदा किछु नाहि विसूरे॥
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे॥ अंग - 707

पर साथ ही गुरु महाराज जी ने हमें बता दिया है कि प्रभु नाम की प्राप्ति के बिना जीव किसी भी हालत में शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता।

बिनु हरि नाम न सांति होइ
कितु बिधि मनु धीरे।। *अंग - 707*

इस बैसाख के महीने में पूरी तरह से विस्तारपूर्वक बता दिया है -

वैसाखि धीरनि किउ वाढीआ
जिना प्रेम बिछोहु।।
हरि साजनु पुरखु विसारि कै
लगी माइआ धोहु।।

पुत्र कलत्र न संगि धना
हरि अविनासी ओहु ।।
पलचि पलचि सगली मुई
झूठै धंधै मोहु ।। *अंग - 133*

इस प्रकार एक ओर वाहिगुरु जी का प्यार है जो हमेशा साथ निभाता है। जहाँ किसी की भी पहुँचने की सामर्थ्य नहीं है, वहाँ नाम सहायता करता है -

जह मात पिता सुत मीत न भाई।।
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।।
जह महा भइआन दूत जम दलै।।
तह केवल नामु संगि तेरै चलै।।
जह मुसकल होवै अति भारी।।
हरि को नामु खिन माहि उधारी।।
अनिक पुनर चरन करत नही तरै।।
हरि को नामु कोटि पाप परहरै।।
गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे।।
नानक पावहु सुख घनेरे।। *अंग - 264*

दूसरी ओर वह माया है जिसके साथ प्रेम डालकर हमें दुःख ही दुःख भोगने पड़ते हैं। उसकी प्रीत सुख नहीं देती, उसकी याद मन में बसी हुई है, हमें निकृष्ट यौनियों में चक्कर लगवाती है, जैसा कि -

जिस कै अंतरि राज अभिमानु॥
सो नरकपाती होवत सुआनु॥ *अंग - 278*

कुत्ता बनता है नरकों में -

जो जानै मै जोबनवंतु॥
सो होवत बिसटा का जंतु॥ *अंग - 278*

इसलिये महाराज जी फुरमान करते हैं कि इन चीजों से वाहिगुरु जी को भूल जाता है। वाहिगुरु जी को भूल कर माया की धोखे से भरी आकर्षण लगी हुई है - संसार को -

हरि साजनु पुरखु विसारि कै
लगी माइआ धोहु ।। *अंग - 133*

जो इसके सम्बंधी हैं पहले तो वे जीवित रहते हुए ही बेरुखी धारण कर लेते हैं। यदि मनुष्य के मन में भ्रम हो कि पुत्र सुख का साधन होते हैं, वे बुढ़ापे में जब नेत्र और प्राण चलने से जबाब दे देंगे, वे रक्षा करेंगे। यह एक बहुत बड़ा छल है। कलयुगी बेटों ने कभी भी किसी ने अपने माँ-बाप की रक्षा नहीं की। माँ-बाप की सेवा छोड़कर वे अपने परिवार में, अपनी दुनियां में, अपने रंगों में ही मस्त रहते हैं। ये तो प्राचीन समय की बातें थीं, जब श्रवण जैसे पुत्र नेत्रहीन माँ-बाप को बहंगी में बिठाकर 68 तीर्थों का स्नान करवा रहा था। आधुनिक युग के पुत्र माँ-बाप के साथ कोई सम्बंध नहीं रखते। जब शादी हो जाये तो अपनी अलग दुनियां बना लेते हैं तथा झूठे प्यार के रंगों में पड़कर अपने फर्ज से पूरी तरह कोताही करते हैं। माँ बाप की सम्भाल तो क्या, वे पीठ दिखा कर भाग जाते हैं तथा यही आशा करते हैं कि हमें कोई और आदमी उनका क्रिया कर्म करके यह बता दे कि वे संसार से कूच कर गये हैं। यह मैं सत्य बात बता रहा हूँ क्योंकि मैंने यह अनुभव देखा हुआ है। मेरे पास बहुत सारे ऐसे माँ-बाप आते रहते हैं। कई बुजुर्ग तो हमारे पास ही आ गये हैं और कहते हैं कि मुझे तो अपने पुत्र से ही डर लगता है कि कहीं मेरा गला न घोंट दे। जब पुत्र को पालना होता है तो कितना कष्ट, कितनी मेहनत अपने आप करता है। पर गुरु महाराज का जो वचन है उसे पूरी तरह से भूलकर अपना जीवन, अपना सुख चैन नष्ट कर लेता है। यहाँ तक भी मैंने देखा है कि जिसे पुत्र की दात नहीं मिली हुई, वे बहुत ही उदासी में जीवन व्यतीत करते हैं। हर श्वास पुत्र पाने की आशा में मन को टिकाये रहते हैं। ऐसे प्रेमी वाहिगुरु जी को हमेशा ही भूले रहते हैं। जिसने सदा ही साथ देना है जो प्यार में वश में हो गया हो अपने प्यारों की बात मान कर सब कुछ दे देता है -

जो किछु करै सोई प्रभ मानहि
ओइ राम नाम रंगि राते॥
तिन की सोभा सबनी थाई
जिन प्रभ के चरण पराते॥ *अंग - 748*

इस प्रकार ऐसे वाहिगुरु को छोड़कर मोह माया के झूठे धन्धों में फंस-फंस कर पड़े हुए जीव मर रहे हैं। गुरु महाराज जी इन्हें निकालने के लिए अर्शी बाणी द्वारा प्रकाश प्रदान करते हैं पर यह जीव इतना जिद्दी हो गया कि जो गुरु पीर का कोई भी वचन हृदय में नहीं बसाता। पढ़ता भी है, लोगों को समझाता भी है। पर आप इन उच्च्य आदर्श नियमों से हीन रहता है सो महाराज जी फुरमान करते हैं-

हर साजनु पुरखु विसारि कै
लगी माइआ धोहु ।। *अंग - 133*

माया का आकर्षण पड़ा हुआ है - दिन रात। इस आकर्षण में जीवन जबरदस्ती फंसता ही जा रहा है। 24,000 श्वास उसका प्रतिदिन इसी छल की भेंट चढ़ जाता है। हुक्म तो गुरु महाराज का यह था कि -

सासि सासि सिमरहु गोबिंद॥
मन अंतर की उतरै चिंद॥ अंग - 295

और महात्मा कहते हैं कि -

सास सास हरि नाम जप ब्रिथा सास मति खोइ।
किआ जानै कि अंत कउ इही सास मति होइ।

सो कैसे वाहिगुरु जी हुये, कितने दयालु, कितने पतित पावन कि भावनी ही देखी। सो ऐसे वाहिगुरु को छोड़कर, 'हरि साजन पुरख विसार कै' माया में छल प्रपचों में हम फंस गये तथा पुत्रों, रिश्तेदारों, परिवार में फंसे हुये, सदा ही उसे भूले रहते हैं तथा झूठे धन्धों में फंसे हुये अपना जीवन बर्बाद कर देते हैं।

पुत्र कलत्र न संगि धना
हरि अविनासी ओहु।।
पलचि पलचि सगली मुई
झूठै धंधै मोहु।। अंग - 133

उसके सच्चे नाम का भुला दिया जाता है, उसकी जगह श्वासों का मान न करते हुये, माया की कच्ची प्रीत के साथ जुड़कर हम अपना समय बर्बाद कर लेते हैं। इसलिये महाराज जी फरमाते हैं कि प्यारे! तेरी समझ में कुछ नहीं आता।

पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु।।
पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु।। अंग - 133

उस अविनाशी ने तेरी सहायता करनी है -

जिह मारग के गने जाहि न कोसा॥
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा॥
जिह पैडै महा अंध गुबारा॥
हरि का नामु संगि उजीआरा॥
जहा पंथि तेरा को न सिञानू॥
हरि का नामु तह नालि पछानू॥
जह महा भइआन तपति बहु घाम॥
तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम॥
जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै॥
तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै॥ अंग - 264

सारा संसार उलझ कर मर रहा है। बाकी जिन कर्मों-धर्मों में यह मनुष्य फंस कर अपना जीवन बिता देता है, उसके बारे में महाराज जी का फुरमान है कि जब वह परलोक में जाता है तो जैसे यहाँ सड़कों पर टोल-टैक्स लगते हैं, इसी प्रकार दरगाह में भी जगह-जगह से पार कराने वाले, जैसे यहाँ पर सड़क पर चलने वालों से पैसे लेते हैं, उसी प्रकार वहाँ शुभ कर्म ले लिये जाते हैं क्योंकि अन्धेरे में जीव ठोकरें खाता है, वहाँ किया गया पुण्य कर्म देकर, जीवन गुजरता है, उसे थोड़े समय के लिये प्रकाश मिल जाता है।

करम धरम पाखंड जो दीसहि
तिन जमु जागाती लूटै॥
निरबाण कीरतनु गावहु करते का
निमख सिमरत जितु छूटै॥ अंग - 747

सो फुरमान है -

इकसु हरि के नामु बिनु अगै लईअहि खोहि।।
अंग - 133

कर्म-धर्म छीन लिये जाते हैं, यम लूट लेते हैं। सो इसलिये वाहिगुरु के बिना इसका रक्षक और कोई नहीं, उसे भूल कर आता है, बर्बाद होता है। पर महापुरुष उसे ऊँची-ऊँची आवाज लगाकर बताते हैं तथा अनेक तरीकों से समझाते हैं पर यह कानों से पूरी तरह बहरा है, सत्य शब्द को नहीं सुनता।

माइआधारी अति अंना बोला॥
सबदु न सुणई बहु रोल घचोला॥ अंग - 313

बाबा फरीद जी फुरमान करते हैं कि इस जीव को चारों वेद, छः शास्त्र, सत्ताईस स्मृतियां, उपनिषद, गीता, कुरान शरीफ, बाईबल, तौरेत, अन्जील, जम्बूर आदि अनेक ग्रन्थ सहित गुरु ग्रन्थ साहिब जी के तथा अनेक महात्मा इसे उपदेश देते हैं कि, ऐ मनुष्य! तुझे मनुष्य जन्म बहुत मुश्किल से प्राप्त हुआ है, इसे व्यर्थ मत गंवा। पुकार-पुकार कर कहते हैं -

इही तेरा अउसरु इह तेरी बार।।
घट भीतरि तू देखु बिचारि।।
कहत कबीरु जीति कै हारि।।
बहु बिधि कहिओ पुकारि पुकारि।। अंग - 1159

तथा बहुत विस्तारपूर्वक समझाते हैं -

जब लगु जरा रोगु नही आइआ॥

जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ॥
जब लगु बिकल भई नही बानी॥
भजि लेहि रे मन सारिगपानी॥
अब न भजसि भजसि कब भाई॥
आवै अंतु न भजिआ जाई॥
जो किछु करहि सोई अब सारु॥
फिरि पछुताहु न पावहु पारु॥ *अंग - 1159*

सो इस प्रकार समझाने के बावजूद भी यह जीव माया के जहरीले डंक से मूर्च्छित हुआ सुनता ही नहीं, ध्यान नहीं देता, उस समय तक, जब तक काल आकर इसकी गर्दन नहीं मरोड़ देता। फिर यह पछताता है, छटपटाता है, पर अब कुछ नहीं बन सकता क्योंकि समय तो इसने बर्बाद कर दिया। महापुरुषों का कहना माना नहीं। बाबा फरीद जी का फुरमान है -

फरीदा कूकेदिआ चांगेदिआ
मती देदिआ नित।।
जो सैतानि वंञाइआ
से कित फेरहि चित।। *अंग - 1378*

सो महाराज जी फुरमान करते हैं कि -

इकसु हरि के नाम बिनु अगै लईअहि खोहि।।
अंग - 133

वाहिगुरु को भुलकर बर्बाद ही होता है क्योंकि उसके बिना कोई भी सहायता नहीं कर सकता, उसने गुरु की कृपा, गुरु का मार्ग दर्शन द्वारा अपने अन्दर खो करके, हउमै की मैल दूर करके, आत्मा परमात्मा को एक करके देखना है तथा उसके साथ पूरी तरह अभेद होना है क्योंकि इस मनुष्य जन्म की बारी हमें इसीलिये प्राप्त हुई है -

भई परापति मानुख देहुरीआ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम॥
सरंजामि लागु भवजल तरन कै॥
जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥
अंग - 12

सो इसलिये -

दयु विसारि विगुचणा
प्रभ बिनु अवरु न कोइ।। *अंग - 134*

आगे जाकर तो उन्हें ही धन्य-धन्य कह कर शोभा प्राप्त होगी, जिन्होंनें इस शरीर के होते हुये पूरे समर्थ गुरु की शरण में आकर शबद की कमाई करके अपने आन्तरिक अन्धकार में शबद की ज्योति जलाई है। उनके बारे में फुरमान है -

धंनि धंनि कहै सभु कोइ॥
मुख ऊजल हरि दरगह सोइ॥ *अंग - 283*

परन्तु इस उपदेश को बहुत कम मनुष्य सुनते हैं बाकी अपनी मूढ़ मति के सामने झुके हुये सत्य उपदेश को नहीं सुनते। विचार के नेत्रों से शून्य हुये अन्धे रहते हैं तथा गुरु का उपदेश सुनकर हृदय में नहीं बसाते। महाराज जी कहते हैं कि जो इस मनुष्य जन्म प्रभु की शरण ले लेता है, उसकी शरण में आकर उसके साथ जुड़ जाता है, उनकी निर्मल शोभा यहाँ भी होती है, दरगाह में भी होती है। गुरु महाराज जी का फुरमान है -

मन रे प्रभ की सरनि बिचारो।।
जिह सिमरत गनका सी उधरी
ता को जसु उर धारो।। *अंग - 632*

गनिका जैसी पापिन, प्रभु की शरण में आकर उसके नाम में लीन हो गई। दुनियां के लिए एक मिसाल बन गई कि महा पापी भी उसके नाम के साथ उच्च अवस्था प्राप्त कर सकता है तथा नाम उनके पापों को समाप्त करने की शक्ति रखता है। भाई गुरदास जी फुरमान करते हैं -

गनिका पापण होइकै
पापां दा गल हार परोता।।
महां पुरख अचाणक
गनिका वाड़े आइ खलोता।।
दुरमति देख दइआल होइ
हथहुं उसनो दितोसु तोता।।
राम नाम उपदेश कर
खेल गइआ दै वणज सओता।।
लिव लागी तिस तोतिअहुं
नित पड़ाए करै असोता।।
पतित उधारण रामनाम
दुरमति पाप कलेवर धोता।।
अंत काल जम जाल तोड़
नरकै विच न खाधोसु गोता।।
गई बैकुंठ बिबाण चड़
नाउ नाराइण छोत अछोता।।

थाउं निथावैं माण माणोता।।

भाई गुरदास जी, वार 10/21

सो इसलिये वाहिगुरु जी की चरण-शरण में आने वाले की यहाँ भी शोभा होती है तथा दरगाह में भी शोभा होती है तथा उसे -

रे रे दरगह कहै न कोऊ।।
आउ बैठु आदरु सुभ देऊ।। अंग - 252

तथा वह गुरु कृपा से यमों की मार से बच जाता है क्योंकि गुरु ने उसे अपने पल्ले लगाकर नाम की बख्शीस दी, उसने कमाई की, जिसके बारे में फुरमान है -

कबीर जम का ठेंगा
बुरा है ओहु नही सहिआ जाइ॥
एकु जु साधू मोहि मिलिओ तिनि लीआ
अंचलि लाइ॥ अंग - 1368

अन्त में महाराज जी हमें बताते हैं कि प्यारे! वाहिगुरु जी के चरणों में प्रार्थना करो कि हे प्रभु! मुझ में तुझे मिलने की समर्थ नहीं है। मैं एक उद्यमी जीव हूँ, मैं माया के जाल में बुरी तरह फंसा हुआ हूँ। मैं माया की दलदल मे से उसी प्रकार से नहीं निकल सकता जैसे लंगड़ा गधा दलदल में फंसा हुआ नीचे की ओर ही धसता चला जाता है। आप मुझे स्वयं ही प्रत्यक्ष होकर, इस माया की दलदल में से निकाल दो ताकि मैं उस आनन्द मण्डल में पहुँच जाऊँ जिसके बारे में आपने फुरमान किया है -

चेति गोबिंदु आराधीऐ होवै अनंदु घणा।। अंग - 133

इस महीने के अन्त में गुरु महाराज जी फुरमान करते हैं कि प्यारे! निश्चयपूर्वक हमारा वचन मान लो कि पहले तुम्हें समर्थ गुरु मिल जाये तथा वह तुम्हें वाहिगुरु जी से मिला दे। सो वैशाख का महीना, तभी सुहावना लगता है -

प्रीतम चरनी जो लगे
तिन की निरमल सोइ।।
नानक की प्रभ बेनती
प्रभ मिलहु परापति होइ।। अंग - 134

सो पहले महीने चैत में यह प्रार्थना की गई थी कि, 'हे वाहिगुरु जी, जो मुझे तेरा मिलाप करा दे, मैं उसके चरणों की धूलि बन जाऊँ क्योंकि मेरा मन तेरे दर्शनों को लोचता रहता है।' तेरे मिलाप के बिना जो मुझे दुःख हो रहा है वह मैं ही जानता हूँ। तेरे प्यार के बिना मेरा जन्म व्यर्थ है। चेत के महीने में सन्तों ने रसना के साथ नाम जपने की ताकीद की थी। अब मैं प्रार्थना करता हूँ कि मुझे आप स्वयं ही मेरी सहायता करके अपने चरणों के साथ लगा लो। मैं तुझे भूल कर, बेअन्त माया के आडम्बरों में फंस गया हूँ, मुझे इस बात का ज्ञान गुरु द्वारा प्राप्त हुआ है। इस मानस जन्म के रहते-रहते यदि मैं अपने अन्दर तुझे न देख सका तो मैं बाजी जीत कर भी हारा हुआ पता नहीं कौन-कौन सी योनियों में भटकता रहूँगा। तेरी रहमत की आवश्यकता है। कृपा कर। मिला अपना कोई प्यार! मैं अपना सर्वस्व उस प्यारे के चरणों में न्यौछावर कर दूँगा, जो मुझे तेरे साथ मिला देगा। मेरी प्रार्थना है, आप श्रवण करो -

हउ बलिहारी तिंन कंउ जो गुरमुखि सिखा।।
जो हरि नामु धिआइदे तिन दरसनु पिखा।। अंग - 650

क्योंकि उन्हीं की संगत के कारण, मेरी याद में तू बसता है -

उन कै संगि मोहि प्रभु चिति आवलै
संत प्रसादि मोहि प्रभ चिति आवै
संत प्रसादि मोहि जागी।।
सुनि उपदेसु भए मन निरमल
गुन गाए रंगि रांगी।।
इहु मनु देइ कीए संत मीता
क्रिपाल भए भडभागी।।
महा सुखु पाइआ बरनि न साकउ
रेनु नानक जन पागी।। अंग - 1267

हे प्रभु! जो मुझे बन्धनों से मुक्त करा दे, तेरे नाम की कथा सुनाये, मेरे मन में तेरा प्यार दृढ़ करा दे और मेरा मन फिर माया में गोते न लगाये। मुझे ऐसा प्यारा मिला दे, जो कुछ भी मेरे पास है मैं उसके चरणों में अर्पित कर दूंगा।

बंधन ते छुटकावै प्रभू मिलावै
हरि हरि नामु सुनावै।।
असथिरु करे निहचलु
इहु मनूआ बहुरि न कतहू धावै।।
है कोऊ ऐसो हमरा मीतु।।
सगलु समग्री जीउ हीउ
देउ अरपउ अपनो चीतु।। अंग - 674

तन मन धन अरपओ तिसै प्रभू मिलावै मोहि।।

(शेष पृष्ठ 33 पर)

बैशाखी

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ अंग - 256

फिरत फिरत प्रभु आइआ परिआ तउ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥अंग - 289

धारना - लाड लडाइआ तेरे भरोसे मैं।

तेरै भरोसै पिआरे मै लाड लडाइआ॥
भूलहि चूकहि बारिक तूं हरि पिता माइआ॥
सुहेला कहनु कहावनु॥
तेरा बिखमु भावनु॥
हउ माणु ताणु करउ तेरा हउ जानउ आपा॥
सभ ही मधि सभहि ते बाहरि बेमुहताज बापा॥
पिता हउ जानउ नाही तेरी कवन जुगता॥
बंधन मुकतु संतहु मेरी राखै ममता॥
भए किरपाल ठाकुर रहिओ आवण जाणा॥
गुर मिलि नानक पारब्रहमु पछाणा॥ अंग - 52

धारना - निरवैर निराला जी,
सतिगुर पुरख अगंम है।

सतिगुर पुरखु अगंमु है निरवैरु निराला।
जाणहु धरती धरमु की सची धरमसाला।
जेहा बीजै सो लुणै फल करम समाला।
जिउ करि निरमलु आरसी जगु वेखणि वाला।
जेहा मुहु करि भालीऐ तेहो वेखाला।
सेवक दरगह सुरखरू वेमुखु मुहकाला॥
भाई गुरदास जी, वार 34/1

साधुसंगत जी! अपनी चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो तथा श्री गुरू नानक देव जी का ध्यान रखते हुए सभी उच्च स्वर में बोलो सतिनाम श्री वाहिगुरू। अपने व्यवसायिक कार्यों को विराम देते हुए आप सब गुरू दरबार में पहुँचे हैं। ये जो वर्तमान दिन चल रहे हैं यानि कि पन्द्रह मार्च से आगे वाले, होला महल्ला आया और उसके बाद जो ये दिन आ रहे हैं इन दिनों में आनन्दपुर साहिब में बहुत बड़ी तैयारी की जा रही थी। हजारों लोगों को निमन्त्रण पत्र भेजे जा रहे थे ताकि वे आगामी विशेष कार्यक्रम में अधिकाधिक संख्या में पहुँचें। इतिहासकार लिखते हैं कि वह इतना बड़ी एकत्रता थी जिसमें कि 80,000 लोग सम्मिलित हुए थे। उन दिनों में लाउडस्पीकर नहीं हुआ करते थे, लेकिन फिर भी साधारण आवाज में ही इतनी शक्ति हुआ करती थी कि मीलों तक आवाज सुनाई दे जाया करती थी। शुरू-शुरू में जब हम सन्त महाराज जी (श्रीमान सन्त बाबा ईशर सिंह जी) के दीवान सुना करते थे तो उस समय से थोड़ा पहले की बात है जिन्हें कि लोग सुनाया करते थे कि जब सन्त महाराज सन्त बाबा अतर सिंह जी मस्तूआणे वाले दीवान सजाया करते थे तो दो-दो मील तक आवाज सुनाई पड़ जाया करती थी। जिस समय हम लोग सन्त महाराज जी के दीवान सुनने जाया करते थे तो घलोटी गांव, जो कि राड़ा साहिब से एक कि. मी. पहले ही है, से ही महाराज जी की आवाज सुनाई देने लग जाया करती थी। न जाने उस समय कान ही अच्छे थे, या फिर आवाजों के अन्दर ही कोई चमत्कारिक शक्ति हुआ करती थी। उस समय लाउड स्पीकर की मदद के बिना ही हजारों व्यक्ति, आवाज को सुन सकते थे। अत: उस समय एक बहुत बड़ा इकट्ठ हुआ। दूर-दूर तक मसन्दों को यह हुक्मनामे भेजे गए कि वे अधिकाधिक सख्या में लोगों को लेकर निधार्रित स्थान, यानि कि बैसाखी पर्व के समय श्री आनन्दपुर साहिब में पहुँचें। इससे पहले श्री गुरू दशमेश जी ने नौ महीने नौ दिन एक पहाड़ी पर एकान्तवास किया, उस दौरान आप किसी को भी नहीं मिलते थे। जिस समय आप दीवान में आए तो उस समय कई मसले थे जिनके ऊपर महत्वपूर्ण फैसले लिए जाने थे।

दरअस्ल श्री गुरू नानक देव जी से पहले भी कई

महजब अस्तित्व में थे जैसे इस्लाम, बौद्ध, जैन, योगीजन, हिन्दू मत आदि। लेकिन विडम्बना यह थी कि इन महजबों के जो मूल सिद्धान्त, जो मूल ग्रन्थों के उद्देश्य, सत्युग त्रेता या द्वापर में थे वे सब समाप्त हो चुके थे और उनके स्थान पर केवल बाह्य आडम्बर या कर्मकाण्ड मात्र ही रह गए थे। वास्तविकता यह होती है कि जब मजहबों के पास कोई जागृत सिद्धान्त ही न रह जाए, लोगों का मार्गदर्शन करने के लिए कोई तथ्य ही न रह जाए तो उस समय उन महजबों के अनुसरणकर्ताओं के पास निर्मल रस्मों में पड़ जाने के अतिरिक्त कोई उपाय ही नहीं रह जाया करता है।

श्री गुरू नानक देव जी ने जनेऊ पहनने के निन्दा नहीं की लेकिन आपने उसे स्पष्ट करते हुए बतलाया कि यदि तुमने जनेऊ पहनना ही है तो दया की कपास बना लो, सन्तोष का धागा तथा ब्रह्मचर्य की उसे ऐंठन दो। इसके बाद उसे सत्य की गाँठें देकर इसे अपने शरीर पर धारण करो। यदि वह जनेऊ धारण करने से ये सारे गुण तुम्हारे अन्दर प्रवेश ही नहीं करते हैं तो फिर यह धागा तुम्हारा उद्धार कैसे कर पाएगा? यह तुम्हारे जन्म को बदल नहीं पाएगा, तुम्हारा उद्धार तो इन गुणों को धारण करने से हो पाएगा। इस्लाम वालों को गुरू जी ने यही कहा है कि यदि तुमने रोजे रखने हैं तो इस चीज के रखो, यदि इस्लाम धारण करना तो मोम के सदृश्य हृदय को बना लो। यदि तुम नमाज पढ़ते हो तो उसका तात्पर्य समझो कि उसका अर्थ क्या है? वैसे ही नमाज पढ़ने का कोई लाभ नहीं है। सयाने लोग समझते हैं कि इस पर विचार करो। मोटे रूप में उस समय भारतवर्ष के अन्दर दो मतों का ही जोर था। इस्लाम वालों के पास शक्ति अधिक थी और दूसरा था हिन्दू मत, जिसके अन्दर ही अन्य सारे सम्प्रदाय समाहित थे। उस समय धर्म की वास्तविकता तो समाप्त हो चुकी थी और वह केवल कर्मकाण्ड तक ही सीमित रह गया था। धर्म के अन्दर कोई उत्साह नहीं था और वह उल्टा एक वहमपरस्ती मात्र ही बनकर रह गया था। यही कारण था कि धर्म के अन्दर जान भरने के लिए श्री गुरू नानक देव जी से लेकर नौवें महाराज जी तक व्यक्ति के आचरण को ऊँचा उठाने के सफल प्रयास किए गए। इस प्रयोजन हेतु गुरू जी बड़े-बड़े पीरों के पास गए, बड़े-बड़े महात्माओं के पास गए और उन्हें असली बात समझाई जिसके द्वारा उनके आचरण में उच्चता आई। उस समय श्री गुरू दशमेश जी ने सारे विश्लेषण के बाद इस बात पर ध्यान दिया कि जब तक समाज का काया कल्प नहीं किया जाता है, जब तक धर्म का वास्तविक अर्थ समाज के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया जाता है, तब तक कोई बड़ा परिवर्तन होने वाला नहीं है क्योंकि श्री गुरू जी से पहले बेहद अन्धकार छा चुका था। गुरू महाराज जी को उसका वर्णन इस प्रकार से करना पड़ा -

धारना - सारे कूड़ दा हो गिआ वरतारा,
सच्चा वाला काल पै गिआ।

सचि कालु कूड़ु वरतिआ
कलि कालख बेताल॥
बीउ बीजि पति लै गए
अब किउ उगवै दालि॥ *अंग - 468*

सचि

सर्वत्र झूठ का ही वातावरण बन चुका है -

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ॥
अंग - 185

वह इस प्रकार का समय था जिसमें धर्म नाम की कोई भी चीज शेष नहीं रह गई थी। यदि व्यक्ति के अन्दर धर्म ही न रह जाए तो वह किसी भी मजहब का पैरोकार नहीं बन सकता है क्योंकि धर्म के बिना व्यक्ति का जीवन बिल्कुल निरर्थक ही हुआ करता है -

कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ।।
अंग - 145

झूठ की अमावस्या आ गई तथा सत्य का जो चन्द्रमा है वह कहीं पर दिखाई ही नहीं पड़ रहा है -

हउ भालि विकुंनी होई।। आधेरै राहु न कोई।।
अंग - 145

संसार के अन्दर प्रत्येक स्थान पर अन्धेरा छा चुका था। धर्म अपने कर्तव्य का निर्वाह ठीक ढंग से नहीं कर रहे थे, वैसे धर्म कोई बुरे नहीं थे अपितु बिल्कुल सही थे, लेकिन समस्या यह थी कि उनका प्रयोग गलत हो चुका था। इस्लाम धर्म मूलतः कोई बुरा नहीं था, उसका सिद्धान्त श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी से बहुत हद तक मिलता जुलता है और मैं यह कहना भी उचित समझता हूँ कि वह 95 प्रतिशत ठीक भी है। वे एक वाहिगुरू को मानने वाले हैं, तथा एक वाहिगुरू के हुक्म को मानते हैं तथा उसकी कृपा पाने के लिए उसकी

भजन बन्दगी भी करते हैं, पाँच बार वे खुदा के चरणों में दुआ करते हैं लेकिन वह एक धारणा बन चुकी थी। वैसे तो समय के अन्तराल से प्रत्येक धर्म में ऐसा ही होता है क्योंकि केवल रीति रिवाज ही शेष रह जाते हैं। अतः फिर उस प्रकार के मजहब, रीतियों वाले ही रह जाया करते हैं और उनके अन्दर की सच्चाई लुप्तप्राय हो जाता करती है। यही कारण था कि इस्लाम धर्म वालों ने कहा कि हिन्दुओं का कत्ल कर डालो या फिर इन्हें इस्लाम में ले आओ। ऐसा करने से ही इनकी मुक्ति हो पाएगी। अपनी स्वयं की तो मुक्ति हो नहीं पा रही है और दूसरों की मुक्ति करने का ठेका ले लेते हैं। यहाँ तक कि बाबर अपनी 'तऊजके बाबरी' में लिखता है कि मथुरा के युद्ध के बाद मैंने एक लाख लोगों को पकड़ा और उन सबको एक दिन में ही कत्ल करवा दिया। मुझे चार बार अपना टेंट बदलना पड़ा क्योंकि इतना ऊँचा खून हो गया था, मुझे शत-प्रतिशत विश्वास है कि खुदा मेरे ऊपर बेशुमार रहमत करेगा क्योंकि मैंने इतने काफिर मार डाले हैं। अब आप लोग ही बतलाओ कि किस प्रकार की बहादुरी की बात थी? यह एक धार्मिक अन्धेपन की या पागलपन की पराकाष्ठा है। जो धर्म का वास्तविक कार्य होता है वह मनुष्य का मार्ग दर्शन करना होता है न कि उसे अन्धकार के गर्त में धकेलना होता है। धर्म तो बहुत महान चीज है यदि धर्म न हो तो न तो राजकाज चलता है न इन्सान का जीवन चल पाता है और न ही वह किसी भी महजब का पैरोकार ही बन सकता है। अतः जब तक धर्म के वास्तविक गुण नहीं आ पाते हैं, तब तक कुछ भी उन्नति नहीं हो पाती है। इसी चीज को लाने के लिए श्री गुरू नानक देव जी से लेकर गुरू नौवें महाराज जी तक बहुत जबरदस्त कोशिश की गई। धार्मिक गुणों को जैसे कि क्षमा, अहिंसा, शौच, पवित्रता आदि को मनुष्य के अन्दर उत्पन्न किया गया। न तो शारीरिक रूप से किसी को नुक्सान पहुँचाया जाए न मानसिक रूप से बल्कि दूसरों की रक्षा करनी चाहिए आदि गुणों को मनुष्य के अन्दर भरा गया। मनुष्य को सदैव मधुर वाणी ही बोलनी चाहिए क्योंकि फीके शब्दों के द्वारा बहुत बड़ा अनर्थ हो सकता है, महाभारत का युद्ध इसका सटीक उदाहरण है। महाभारत का युद्ध फीके शब्दों के कारण से ही शुरू हुआ था। भाई शोभाराम को अपशब्दों के कारण ही रीछ बनना पड़ा। अतः बोलने से भी अहिंसा होती है। तीसरी होती है मन की अहिंसा अर्थात मानसिक रूप से कभी भी किसी का बुरा नहीं करना -

पर का बुरा न राखहु चीत॥
तुम कउ दुखु नही भाई मीत।। अंग - 386

ववा वैरु न करीऐ काहू॥
घट घट अंतरि ब्रहम समाहू॥ अंग - 259

जो असली चीज है उसे तो हम समझते नहीं है, बस वैसे ही नित्य प्रतिदिन बोल देते हैं कि -

नानक नाम चड़दी कला
तेरे भाणे सरबत का भला।

फिर कचहरियों में क्यों जाते हो? सबका भला मांगने वाला तो प्रार्थना करता है कि हे प्रभु! इसे भी सद्बुद्धि प्रदान कर दो क्योंकि इसकी बुद्धि विपरीत हो गई है, इसलिए इसके ऊपर भी कृपा कर दो। ऐसा नहीं कि उसका बुरा मांगना है। गुरमति के अन्दर तो किसी का बुरा मांगना बिल्कुल निषेध है -

पर का बुरा न राखहु चीत।।

इसका पुरुस्कार क्या मिलेगा?

तुम कउ दुखु नही भाई मीत।। अंग - 386

चौथी अहिंसा होती है - बुद्धि की अहिंसा अर्थात बुद्धि के द्वारा सबका भला करना। प्रत्येक प्रकार से देखना कि यदि इसे यह बात न बताई तो इसका नुक्सान न हो जाए। ऐसा नहीं कि उसके बच्चों को नशीली चीजें खाने की आदत डलवा दो, दूसरों के घरों में झगड़ा डलवा दो, आदि। इसीलिए गुरू जी ने निन्दा को बहुत ही बुरा कहा है। पांचवी अहिंसा होती है कि यदि कहीं अपने पास रूहानी शक्ति आ जाए तो उसके द्वारा किसी का बुरा नहीं करना। यह पाँच प्रकार की अहिंसा हुआ करती है। जो मनमुख लोग होते हैं, वे यह पाँचों प्रकार की अहिंसा किया करते हैं।

इसी प्रकार से दया होती है। दया से ही धर्म की उत्पत्ति होती है। यदि दया न हो तो धर्म भी पैदा नहीं हो पाता है।

धोलु धरमु दइआ का पूतु।। अंग - 3

दया में से धर्म उत्पन्न होता है। दरअस्ल धर्म एवं दया सार्वभौमिक चरित्र का नाम है, इसके पचास साठ गुण होते हैं। मुख्य रूप से दस पन्द्रह गुण होते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य भी बहुत गुण हैं वैसे यदि धर्म के अन्दर दया का गुण

न हो तो वह धर्म परमेश्वर को अच्छा ही नहीं लगता है।

इस प्रकार की ही दया की एक कथा का जिक्र धार्मिक इतिहास के अन्दर प्रायः आता है। कथानुसार एक गुलाम लड़की थी, उसका नाम राविया था और दुर्भाग्यवश वह गुलाम बन गई लेकिन वह भजन बन्दगी बहुत किया करती थी। उसके अन्दर दया भाव बहुत अधिक था। वह एक बड़े काफिले के साथ काबा साहिब के दर्शनार्थ जा रही थी। जब काफिला काबा से साठ मील की दूरी पर रह गया तो वहाँ पर विश्राम के लिए एक स्थान पर शिविर लगाकर ठहर गया। विश्राम के बाद वह काफिला तो प्रस्थान कर गया लेकिन वह राविया समान आदि स्भालती हुई कुछ लेट हो गई उसके बाद ही उसने अपनी तैयारी करनी थी। उधर उसने देखा कि उसके समीपस्थ जो कुआँ है, उसके चारों ओर एक कुतिया घूम रही है। उसे ख्याल आया कि शायद इसके साथ जो बच्चे हैं, वे इससे पानी माँग रह हैं। यह सोच कर वह उन्हें पानी पिलाने का कुछ यत्न करने लग पड़ी। अब उसके पास कोई जल पात्र यानि कि बाल्टी या लोटा आदि भी नहीं था। उसने आखिर अपने कपड़ों को फाड़कर ही रस्सी बनानी शुरू कर दी लेकिन कपड़ों की रस्सी बनाने के बाद भी वह रस्सी कुएँ के पानी तक पहुँच न सकी इसलिए अब उसने अपने सिर के बाल भी काट लिए और उसके साथ चद्दर के टुकड़े को पानी में भिगोती और बाहर लाकर उस कुतिया व उसके पिल्लों के मुख में निचोड़ देती। इस प्रकार अपने सफल प्रयासों से उसने उन्हें पानी पिलाकर उनकी प्यास को बुझा दिया। उस कुतिया की आत्मा ने राविया के लिए खुदा से दुआ माँगी।

इधर जो काफिला था, वह काबा साहिब के दर्शनार्थ वहाँ पर पहुँच गया। उस समय वहाँ पर उस स्थान का मुखी इब्राहीम था। जब इब्राहीम आया तो वह तथा सारे श्रद्धालुजन हैरान हो गए कि काबा साहिब तो यहाँ पर है ही नहीं। अब यहाँ पर एक बात और भी विचारणीय है कि श्री गुरू नानक देव जी के बारे में तो बाद में जिक्र आता है कि जिस दिशा में जीवन ने उनके चरण किए उसी दिशा में काबा भी घूम गया लेकिन यह घटना उससे भी पहले की है उन्हें यह नहीं पता कि मक्का पहले भी गायब हो गया था। उस समय सबने दुआ की कि काबा साहिब कहाँ पर चला गया है? कृप्या दर्शन प्रदान करें। उस समय आकाशवाणी हुई कि काबा तो राविया को दर्शन करवाने के लिए गया हुआ है। उन सबने निवेदन किया कि अल्लाहताला! यह सब कैसे हो गया? आवाज आई कि उसने दया के द्वारा मुझे प्रसन्न कर लिया है इसीलिए काबा वहाँ चला गया है। जिस समय वहाँ पर पहुँचे तो क्या देखते हैं कि वह लड़की अपने शरीर को रेत से ढककर बैठी हुई है। क्योंकि उसके पास कोई वस्त्र तो था नहीं इसलिए उसने एक गड्ढा खोदा और उसके अन्दर बैठ गई तथा उसने अपने शरीर को चारों तरफ से ढक लिया केवल सिर को उसने बाहर रहने दिया। यही नहीं उसके चारों तरफ विरोधी प्रवृत्ति के जानवर भी आकर बैठ गए जैसे कि हिरण, बाघ, शेर, बकरी आदि। इब्राहीम इस दृश्य को देखकर आश्चर्यचकित हो गया कि यह तो कमाल की बात है कि इसके चारों तरफ तो विरोधी स्वभाव के जानवर भी बैठे हुए हैं। जैसे कि जब श्री गुरू नानक देव जी ने रूहानी कीर्तन का नाद किया तो मरदाना कहने लगे, महाराज! ये सब तो विरोधी प्रकृति के जानवर एक साथ बैठे हुए हैं? महाराज जी कहने लगे, मरदाना इनके अन्दर दिव्य शब्द चला गया है इसलिए इनका विरोधी स्वभाव समाप्त हो गया है। इसी प्रकार राविया के चारों तरफ जानवर एकत्र हो गए लेकिन जब यह काफिला पहुँचा तो सारे जानवर उठकर चल पड़े। सारे कहने लगे, ऐ राविया! तुमने कौन सा कार्य किया है जिसके कारण तुम्हें खुदा की दरगाह में स्वीकार कर लिया है? वह कहने लगी, भद्रजनो! मैंने कार्य तो कोई नहीं किया, बस यहाँ पर एक प्यासी कुतिया व उसके बच्चों को मैंने पानी पिलाया है। ये प्यासे थे मैंने इन्हें पानी पिलाने के लिए अपने कपड़े फाड़ डाले तथा सिर बाल भी काट डाले, तब कहीं उनकी रस्सी बनाकर व कुएँ से पानी निकाल कर मैंने इन्हें पानी पिलाया है।

अतः यह दया का काम है, जिसके फलस्वरूप साठ कोस पर आकर काबा ने राविया को दर्शन प्रदान किए। साधु संगत जी! यदि मनुष्य के अन्दर दया न हो तो फिर तो वह कसाई तुल्य ही होता है। बिना दया के धर्म का कोई अस्तित्व ही नहीं हुआ करता है। यथा -

जीअ बधहु सु धरमु करि थापहु
अधरमु कहहु कत भाई।। *अंग - 1103*

जीवों को मार-मार कर खाते हो तो फिर यह धर्म कैसा हुआ? फिर धर्म की परिभाषा क्या हुई?

आपस कउ मुनिवर करि थापहु

का कउ करहु कसाई।। *अंग - 1103*

फिर तुम कसाई किसे कहोगे? फिर कसाई तो तुम स्वयं ही बन गए।

अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु।।
अंग - 136

यह दयाभाव द्वापर युग में आधा ही रह गया था क्योंकि उस समय जानवरों की कुर्बानियां देनी शुरू कर दी थीं। इस प्रकार इसके बाद धार्मिक गुण होता है मधुरभाषी होना। यथा-

नानक फिकै बोलिऐ
तनु मनु फिका होइ।।
फिको फिका सदीऐ
फिके फिकी सोइ।। *अंग - 473*

गुरू साहिब ने सिक्खों को ताकीद की है कि वे कड़वे बचन कदापि न बोलें बल्कि प्यारपूर्वक बात करें। प्यार के द्वारा सबको जीतें। इसके बाद होता है सत्य वचन बोलने। फिर होता है शील यानि कि चरित्रवान होना। सयाने लोग ने चरित्र के लगभग 30 भेद गिने हैं। कड़ुआ वचन बोलना, चरित्र नहीं है, पैसे लेकर मुकर जाना चरित्र नहीं है, फिजूल बातें बोलना, चरित्र नहीं है। अगला गुण होता है शौच यानि कि पवित्रता। अपने घर को पवित्र रखना, अपने वचनों को पवित्र रखना, अपने मन को मैल न लगने देना, अपनी बुद्धि को पवित्र रखना, अपनी जीवात्मा को पवित्र रखना। अतः इस प्रकार से ये सब वे गुण हुआ करते हैं जिन्हें धर्म कहते हैं। इसके बाद आता है - सन्तोष। मेहनत करो, जी भरकर, उसमें कोताही मत करो क्योंकि जो तनख्वाह लेता है लेकिन कोताही भी करता है तो परमेश्वर उसे माफ नहीं करता है। दूसरी तरफ जो भी प्रारब्ध के अनुसार प्राप्त हो जाता है उसमें सन्तोष करो, फिर तृष्णा भाव न रखो। क्योंकि -

एह तिसना वडा रोगु लगा मरणु मनहु विसारिआ।।
अंग - 919

यह व्यक्ति तृष्णा के बहाव मे बहता जा रहा है, इसलिए इसे परमेश्वर भूला हुआ है, मरना भूला हुआ है। उधर 80 वर्ष की आयु हो चुकी होती है और इधर यह कोठियां बना रहा होता है। अतः तृष्णा के अन्दर यह जीव धँसा पड़ा है। अतः यह तृष्णा भी एक आग हुआ करती है -

त्रिसना बिरले ही की बुझी हे॥
कोटि जोरे लाख क्रोरे मनु न होरे॥
परै परै ही कउ लुझी हे॥ *अंग - 213*

करोड़ रुपया इकट्ठा हो गया लेकिन कहता है कि अभी तो मेरे पास एक अरब नहीं हुआ है बल्कि एक करोड़ ही हुआ है। इसकी कोई सीमा नहीं है, गुरू जी कहते हैं -

दमड़ा तिसीका जो खरचै अर खाइ॥
देवै दिलावै रजावै खुदाइ॥
होता न राखै अकेला न खाइ॥
तहकीक दिलदानी वही भिशत जाइ॥ *नसीहतनामा*

यदि वाहिगुरू ने आपको धन प्रदान किया हुआ है तो उसे कुछ अच्छे कार्यों पर लगाओ ताकि संसार का कल्याण हो सके। वाहिगुरू तो संसार के कण-कण में व्याप्त है यदि वाहिगुरू को प्रसन्न करना है तो सेवा करनी शुरू कर दो। जो हम लोग गुरुद्वारा साहिब की इमारत वगैरह बनाना चाहते हैं, वह तो ठीक है क्योंकि उसके द्वारा हमें मानसिक सन्तुष्टि प्राप्त होती है लेकिन इससे आगे समाज के बारे में भी सोचो। ठीक है अपने बच्चों के बारे में भी सोचो लेकिन आपको गुरू ने प्रचुर मात्रा में धन दिया हुआ है। यदि थोड़ा-थोड़ा पैसा भी निकालो तो आप टैलीविजन लगा सकते हो उसके माध्यम से श्री गुरू नानक के सिद्धान्त का प्रचार कर सकते हो, फिर तुम लोग कोई टैक्निकल स्कूल बना सकते हो, कालेज बना सकते हो। बच्चों को अच्छे स्कूलों की कमी की बहुत समस्या है। मैं जहाँ पर भी जाता हूँ लोग प्रायः यही शिकायत करते हैं कि बच्चों ने केश कटवा दिए हैं। कारण स्पष्ट है कि जिस प्रकार के वातावरण में वे पढ़ते हैं, उनके ऊपर उस बात का बहुत प्रभाव पड़ता है और वे अपने दृढ़ इरादे पर कायम नहीं रह पाते हैं। इस प्रकार हम लोग सन्तोष में रहते हुए अच्छी चीजें कर सकते हैं। अतः यह भी एक प्रकार का जीवन है।

दूसरी बात है - भयरहित होना। यथा -

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन।।
अंग - 1427

डरता तो वह व्यक्ति है जो कि गलत कार्यों को करता है। आयकर की चोरी करने वाला डरता ही रहेगा कि कहीं मेरी चोरी प्रकट ही न हो जाए, इसी प्रकार यदि व्यक्ति मान लो यहाँ से कोई समान ले जा रहा है और उसने उसे छिपा लिया है कि चलो कस्टम ड्यूटी बचा लेते हैं तो वह सारे रास्ते में डरता ही जाएगा कि कहीं मुझे कोई पकड़ ही न

ले। अतः गलत काम करने वाला हमेशा डरता ही रहता है –

सो डरै जि पाप कमावदा धरमी विगसेतु।। अंग - 84

इस प्रकार सारे चरित्र को ही धर्म कहा जाता है। मीठा बोलना, दान करना, सेवा करनी, यह सारा कुछ धार्मिक चरित्र ही है। दूसरी बात है कि आन्तरिक ज्ञान का होना। जब तक व्यक्ति को ब्रह्मज्ञान नहीं होता है तब तक उसका आवागमन समाप्त नहीं हो सकता है, ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए अहंभाव रहित होना अत्यावश्यक है। अहंभाव को समझो कि अहंभाव क्या है? यह अहंभाव ही हमें उलझाकर रखता है। जो 'मैं' व 'मेरी' है, यह स्वाभाविक रूप से व्यक्ति के अन्दर होती हैं। कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है, जिसके अन्दर ये दोनों शक्तियां न हों। जब तक अहंभाव है –

हउमै ऐहा जाति है हउमै करम कमाहि।। अंग - 433

जो शख्सियत होती है, उसे अहंभाव कहते हैं। यह अहंकार नहीं होता है, अहंकार अलग चीज होती है। दरअस्ल यह एक भाव होता है और इससे निजात पाने के लिए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब के उपदेश बहुत ही कारगर सिद्ध होते हैं। यह शरीर के अध्यास से ही उत्पन्न होती है और दूसरी तरफ जब यह अपने आप को शरीर नहीं मानता है, मन नहीं मानता है, बुद्धि नहीं मानता है, चित्त नहीं मानता है और यह समझता है कि मैं तो एक आत्मा हूँ, तब इसे अहंभाव से निजात मिलती है और उस समय इसकी अवस्था होती है –

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ
एकु एकु वखाणीऐ।।
आतम पसारा करण हारा
प्रभ बिनां नहीं जाणीऐ।। अंग - 846

दूसरी होती है – सच्ची आीजविका। इसे भी बहुत बड़ा महत्व प्रदान किया गया है। महात्मा बुद्ध ने अष्टांग योग के अन्दर आजीविका को बहुत महत्व दिया है। आप सभी लोग सच्ची सुच्ची आजीविका करते हो, झूठ नहीं बोलते हो, यह बहुत ही उत्तम चीज है। सच्ची आजीविका के द्वारा जो अनाज उत्पन्न किया हुआ होता है, धनापार्जन किया हुआ होता है, वह मन को अत्यन्त निर्मलता प्रदान किया करता है। यथा –

घालि खाइ किछु हथहु देइ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ॥ अंग - 1245

दरगाह में तो वही मिला करता है जो कि यहाँ पर पुण्य-दान किया गया होता है। चौथी बात है आत्म रसिक होना। पहले तो आत्मा का ज्ञान हो फिर आत्मा का चिन्तन करने वाला भी हो। जिस प्रकार से नाम रसिक होता है इसी प्रकार से आत्म रसिक हुआ करता है। इसके अतिरिक्त वह आसुरी सम्प्रदाय जैसे कि वैर, विरोध, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, चुगली, बखीली, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, हंस, हेत, लोभ, कोप (चारों आग की नदियां), राज, माल, रूप, यौवन (पाँचों ठग) आदि से कोसों दूर हो। ये सारी चीजें व्यक्ति को गलत दिशा में ले जाती हैं। दूसरी तरफ इससे बिल्कुल विपरीत दैवी सम्प्रदाय है जो कि व्यक्ति को उन्नति की तरफ ले जाती हैं। अतः जो एक सच्चा सुच्चा इन्सान होता है, उसके अन्दर ये चारों चीजें हुआ करती हैं और इस प्रकार का इन्सान एक ऋषि मुनि या खालसा की पदवी प्राप्त करता है। इस आदर्श को स्थापित करने के लिए श्री गुरू नानक देव जी से ही गुरवाणी की रचना हुई, सिक्खी का बीज फलीभूत हुआ, उपदेश हुए, नौ गुरुओं ने साक्षात देह में आकर सारे संसार को विभिन्न प्रकार से तथा भ्रमण कर-करके समझाया लेकिन जिस परम्परावादी सोच ने अपनी जड़ पकड़ी हुई थी, वह टूट नहीं रही थी। दरअस्ल जो समाज की विभाजन प्रणाली थी उसने बहुत ही भयंकर रूप धारण कर लिया था, जिसने कि समाज का और भारतवर्ष का बहुत अधिक नुक्सान कर दिया। शुरू-शुरू में जब समाज के नीति निर्धारकों ने यह कार्य विभाजन या श्रम विभाजन किया था, उस समय तो यह बहुत ही अच्छी चीज थी और इसका बहुत अधिक महत्व था क्योंकि जो सेवा करता था उसे शूद्र कह दिया, जो व्यापार कार्य में था उसे वैश्य कहा गया, जो फौज में चला जाए उसे क्षत्रिय कह दिया गया तथा जो खोजी स्वभाव का हो, लोगों को मार्ग दर्शन करने वाला हो उसे ब्राह्मण कह दिया गया और यह श्रम विभाजन कोई बुरा नहीं था तथा यह कोई पूर्वनिर्धारित भी नहीं था। कोई भी व्यक्ति तरक्की करके किसी दूसरे सर्किल में प्रवेश कर सकता था, लेकिन बाद में यह हुआ कि यह विभाजन बिल्कुल ही पक्का कर दिया गया। कालान्तर में शूद्र को बिल्कुल नीचे गिरा दिया गया और वैश्य को भी पीछे धकेल दिया गया तथा जो ब्राह्मण था, वह प्रमुख बन गया, उसके जिम्मे छः प्रमुख कार्य थे। ये कार्य थे – वेदाध्ययन करना तथा अध्ययन करवाना, दान देना तथा दान लेना, यज्ञ करना तथा करवाना। इसी प्रकार क्षत्रियों के पाँच कर्म थे। जो वैश्य लोग थे, वे वेद पढ़ा नहीं सकते थे, यज्ञ नहीं करवा सकते थे, दान दे

सकते थे, लेकिन ले नहीं सकते थे। जो शूद्र था उसे कहा गया कि तुम्हें कुछ भी करने की जरूरत नहीं है, तुम केवल उच्च जातियों की सेवा करो फिर तुम्हें उच्च जातियों में जन्म मिलेगा उसके बाद तुम्हें उन कर्मों को करने का अधिकार प्राप्त हो सकेगा। यदि कोई शूद्र अपने मुख से ओंकार शब्द कह देता था (उस समय वाहिगुरू शब्द का आविर्भाव नहीं हुआ था) तो उसे बहुत कड़ी सजा दी जाती थी।

श्री रामचन्द्र जी के समय एक ऋषि था, उसकी स्तुति चहुँओर होने लग पड़ी। वह ब्रह्मज्ञानी था, लेकिन बाल्मीकि की भांति चण्डाल जाति का था। वहाँ पर किसी ब्राह्मण का लड़का परलोक गमन कर गया इसके कारण वहाँ के सारे ब्राह्मणों ने श्री रामचन्द्र जी के दरबार में आकर सत्याग्रह कर दिया क्योंकि आप राजा थे। राजा राम और रामचन्द्र जी का आपस में फर्क है। राजा राम मर्यादा पुरुषोत्तम थे जबकि श्री रामचन्द्र सर्वकला समर्थ पुरुष थे। अतः ब्राह्मण लोग कहने लगे, राजन आपके राज्य में घोर अनीति हो रही है क्योंकि आपके राज्य में एक अनार्य तपस्या कर रहा है और उसका तप चहुँओर यशस्वी होता जा रहा है, अतः उसे मार डालना चाहिए। वह सतलुज नदी के तट पर रहता था। जिस समय उसे मारने के लिए रामचन्द्र जी आए तो उन्होंने कहा कि मैं कहाँ पर आ गया हूँ? क्योंकि यहाँ पर कितनी सुगन्धी आ रही है तथा कितनी शान्ति है यहाँ पर? यहाँ के फूलों में से कितना रूहानी प्रभाव परिलक्षित हो रहा है। ब्राह्मणों ने उन्हें बतलाया कि यही तो माणिक ऋषि का स्थान है। लेकिन जिस प्रकार से राजा राम को राजा होते हुए, सीता जी को वनवास देना पड़ा था, उसी प्रकार से रामचन्द्र जी को भी अपनी तलवार के द्वारा उस ऋषि का वध करना पड़ा। अतः यह जाति की जंजीरें बहुत सख्त थीं।

दूसरी तरफ श्री गुरू नानक देव जी ने, सारी मानवता को, चाहे कोई आर्य था अथवा अनार्य था, अपने आलिंगन में लिया क्योंकि आपने यह नारा बुलन्द किया कि -

सभे साझीवाल सदाइनि
तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ।। अंग - 97

एकु पिता एकस के हम बारिक
तू मेरा गुर हाई।। अंग - 611

अतः सबसे बड़ी आवश्यकता थी कि समाज के अन्दर उत्तम चरित्र की स्थापना की जाए। कुछ समय पहले भारतवर्ष के अन्दर हर्षवर्द्धन राजा हुआ है। वह चक्रवर्ती बादशाह था और उसकी बहुत बडी़ फौज थी, ताशकन्द से लेकर बर्मा तक उसका राज्य था। उसने एक बहुत बड़ी सभा की तथा सभी में निर्णय लेकर सारे कर्मकाण्डों को बहुत अधिक सख्त कर दिया गया, समाज के ताने बाने को और अधिक सख्त कर दिया गया। उसका परिणाम यह हुआ कि क्षत्रियों ने अपने धर्म का त्याग कर दिया और वे युद्ध न कर सके वे कारोबारों में पड़ गए तथा सारा ढांचा चरमरा गया।

यह सारी बात गुरुओं के सामने बहुत ही भयंकर स्थिति में थी। अतः नौवें गुरू जी के बाद श्री दशमेश जी ने एक बहुत बड़ी एकत्रता की तथा उसके अन्दर यह निर्णय लिया गया कि वर्तमान समय की यह माँग है कि समाज का आप्रेशन करना अत्यावश्यक है तथा जिसके लिए एक ऐसे समाज का सृजन भी बहुत जरूरी है जिसमें कि आत्म रसिक लोग है, नाम रसिक हों, दानी हों, सेवा करने वाले हों, तथा वास्तविक धर्म के धारणी भी हों। इस प्रकार का समाज ही भारत का कल्याण कर सकता है, इसी प्रकार के समाज में ऐसी शक्ति आ पाएगी जो कि उस मलेच्छ समाज, जो कि लाख लाख लोगों को शाम तक मौत के घाट उतारना अपनी शान समझता है, का डटकर मुकाबिला कर सके। अतः उस समय श्री गुरू जी ने एक बहुत बड़ा इकट्ठ बुलाया। उस इकट्ठ में कीर्तन हो रहा है और श्री गुरू जी सिंहासन पर बैठे हुए हैं तथा समस्त श्रद्धालुजन चकोरों की भांति गुरू जी के दर्शन कर रहे हैं। जब काफी समय हो गया तो उस समय श्री गुरू जी तख्त पर खड़े हो गए तथा आपने बहुत ही फुर्ती से अपनी तलवार को म्यान में से निकाल लिया तथा आपने एक लैक्चर दिया जिसमें आपने सबको सम्बोधित करते हुए कहा कि ऐ प्रेमीजनो! संसार के अन्दर बहुत अधिक गिरावट आती जा रही है, चरित्र नाम की कोई भी चीज समाज के अन्दर से समाप्त हो चुकी है, धर्म अलोप हो चुका है, राजा लोगों ने कसाइयों का रूप धारण कर लिया है। अब इन सबको सदबुद्धि देने का समय आ गया है, जिसके लिए एक ऐसा स्वस्थ समाज बनना चाहिए जो कि अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए पूरी तरह से जागरूक भी हो तथा बन्दगी करने वाला भी है अर्थात उसके दोनों पक्ष सुदृढ़ हों यानि कि वह गृहस्थी भी पूरा हो तथा हाकिम भी पूरा हो। दुनियादार भी पूरा हो तथा न्यायकारी भी पूरा हो। कहने का तात्पर्य यह है कि वह सर्वगुण सम्पन्न समाज हो। उस समय महाराज

जी ने कहा कि प्रेमीजनो! हमें एक शीश की आवश्यकता है। इस बात पर इतिहासकार बहुत तरह से टपला खा जाते हैं क्योंकि इतिहास के अन्दर यदि कलम गलत चल जाए तो वह श्रद्धा को ही तोड़ कर रख देती है। मैंने इतिहास के अध्ययन से यह प्रभाव देखा है कि जहाँ पर हमारी श्रद्धा बहुत ऊँचे मण्डलों में पहुँची हुई होती है तो इतिहास की कलम हमें श्रद्धा के निम्नतम स्तर पर ले आती है। अब इतिहासकारों ने लिखा है कि जब गुरू साहिब ने आवाज दी तो कोई भी न उठा और गुरू महाराज जी बहुत देर तक इधर-उधर देखते रहे और एक मिनट के बाद उन्होंने दूसरी आवाज लगाई कि है कोई सिक्ख जो अपने शीश को भेंट कर सके? फिर भी कोई नहीं उठा, उस समय सारी एकत्रता में हिलजुल होने लगी तथा लोग उठकर खिसकने लगे। इसके बाद गुरू जी ने तीसरी आवाज लगाई। तीसरी आवाज को सुनकर एक सिक्ख जिसका नाम दया राम था, डरता-डरता व काँपता-काँपता आकर गुरू साहिब के पास खड़ा हो गया तथा कहने लगा, महाराज! मेरा शीश हाजिर है, मुझे आने में कुछ देर हो गई क्योंकि मैं अपने अन्दर ही आने के लिए निर्णय कर रहा था।

साधुसंगत जी! यह कितनी कमजोर बात लिख दी गई है क्योंकि गुरवाणी ने उस समय तक गुरसिक्ख को इतना तैयार कर दिया था कि उसका देह अध्यास टूट चुका था। भाई दयाला जी को देग में बिठा कर उबाला गया, वह कुछ हाय-तौबा करता लेकिन उसने शान्त चित्त प्राणों का त्याग कर दिया। श्री गुरू अरजन देव जी ने दिखला दिया कि दहकती हुई लाल तवी पर किस प्रकार से बैठा जा सकता है? इसके अतिरिक्त गुरुसिक्खों के अन्दर इस ख्याल को बार-बार दोहराया जाता था कि मृत्यु कोई चीज नहीं है। जिस मृत्यु से तुम लोग डरते हो, यह कुछ भी नहीं है, यह तो केवल एक परिवर्तन मात्र है, जिस प्रकार से एक कपड़े उतार कर दूसरे पहन लिए जाते हैं, उसी प्रकार से यह मृत्यु परिवर्तन है। लेकिन इसका ज्ञान तभी हो पाता है जबकि देह अध्यास टूट जाता है। इस प्रकार उन सिक्खों का देह अध्यास टूट चुका था। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर बार-बार इस प्रकार के वचन आते हैं -

धारना - जिहड़ी मौत तों डरे जग सारा, जिहड़ी मौत तों।

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै
मेरै मनि आनंदु॥
मरने ही ते पाईऐ
पूरनु परमानंदु॥ *अंग - 1365*

कबीरा मरता मरता जगु मुआ
मरि भि न जानै कोइ।।
ऐसी मरनी जो मरै
बहुरि न मरना होइ।। *अंग - 555*

अतः उस समय तक गुरसिक्खों का ऐसा ख्याल नहीं था कि वे मृत्यु से बेतहाशा डर रहे हों। उस समय तक गुरसिक्खी को दो सौ साल हो चुके थे। इस प्रकार उस समय भाई दया सिंह उठकर आ गए और कहने लगे, महाराज! मेरे पास तो मेरा कुछ भी नहीं है यह नाचीज शीश आपके चरणों में हाजिर है। आप उस समय पूर्ण ब्रह्मज्ञानी थे और आपको नाम की दात मिली हुई थी। पहले चरणामृत हुआ करता था, वह सबको मिला हुआ था। आप बन्दगी करते थे, पूर्ण ब्रह्मज्ञानी थे, योगी थे क्योंकि उन्होंने अष्टांग योग किया हुआ था और यहीं बस नहीं बल्कि आप सेवादार थे, समस्त शक्तियाँ सहज स्वभाव आपके अन्दर थीं।

एक बार श्री दशमेश जी (जिस समय आप पांवटा साहिब निवास कर रहे थे) कपाल मोचन गए हुए थे, तो वहाँ पर चन्दन नाम का सिद्ध अपने पचास साथियों समेत आ गया। उन्होंने सोचा कि श्री गुरू नानक देव जी के अन्दर तो बहुत शक्तियां हुआ करती थीं लेकिन उनकी गद्दी पर जो गुरू इस समय बैठा हुआ है, उसके बारे में सुना है कि वह कलंगी भी लगाता है, घुड़सवारी भी करता है, शस्त्र भी चलाता है और राजसी ठाठ के साथ रहता है। शायद इसके अन्दर शक्तियां नहीं होंगी, इसलिए चलो उनकी परीक्षा लेते हैं। उस समय वह सिद्ध (चन्दन) अपने पचास साथियों समेत लंगर ग्रहण करने के लिए बैठ गया। एक सिद्धि हुआ करती है जिसके फलस्वरूप व्यक्ति का पेट भरता ही नहीं है, अब उस समय सिक्ख सेवादार पचास लोगों को लंगर ग्रहण करवाने लग पड़े लेकिन वे तो थक गए लंगर व दाल आदि के पात्र भी समाप्ति की ओर बढ़ने लग पड़े लेकिन वे चिल्लाते ही जाएं कि और दाल लाओ, रोटी लाओ। जब सेवादारों की चिन्ता बढ़ने लगी तो वे श्री गुरू दशमेश जी के पास दौड़कर गए तथा विनती की, महाराज! वे लोग तो दाल और रोटी चिल्लाते ही जा रहे हैं, न जाने इतनी रोटियां कहाँ जा रही हैं? श्री गुरू जी ने भाई दया सिंह को कहा

कि ये सिद्ध लोग अपनी शक्तियां दिखा रहे हैं, इसलिए आप ही जाओ। उस समय भाई दया सिंह ने रोटियों वाली टोकरी अपने हाथ में ले ली तथा दाल वाली वाल्टी एक अन्य सेवादार को पकड़ा दी। आप कहने लगे प्रसादा (रोटी) वाहिगुरू! दाल वाहिगुरू! इसके बाद उन सिद्ध लोगों ने अपना जोर लगा लिया लेकिन वह एक-एक रोटी व एक-एक कटोरी दाल समाप्त नहीं कर सके। उसके बाद सेवादारों ने कहा कि हमारे यहाँ जूठ छोड़ने का रिवाज नहीं है, इसलिए कोई भी जूठ न छोड़े और सारा भोजन ग्रहण करने के बिाद ही उठें। आखिर में वे लोग उठ खड़े हुए और कहने लगे, महाराज! हमारे पूर्वजों ने श्री गुरू नानक देव जी को आजमाया था, उनके साथ हम शक्तियों के विवाद में पड़ गए थे और आज हम लोगों ने आपको आजमाया है, अब हमें पूर्ण यकीन हो गया है कि उस समय से लेकर आज तक कुछ भी कम नहीं हुआ है। भाई दया सिंह कहने लगे, भाई चन्दन! तुम्हें भ्रम लग गया है मैं तो गुरू जी का एक गरीब सिक्ख हूँ। गुरू जी तो उस तरफ बैठे हुए हैं, चलो मैं तुम्हें उनके दर्शन करवाता हूँ। जब उन्होंने गुरू जी के दर्शन किए तो गुरू जी के चेहरे की आभा को देखकर दंग रह गए तथा सबने अपने सिर झुका लिए। उस समय कहने लगे कि जिस गुरू के सिक्ख में ही इतनी शक्ति है तो फिर गुरू तो विशुद्ध शक्तियों का ही भण्डार होगा।

अतः भाई दया सिंह इस प्रकार के थे, ऐसा नहीं था कि जब गुरू जी ने आवाज लगाई तो आप चुपचाप डर कर बैठे रहे। हाँ हमारे तथाकथित इतिहासकार अपनी सोच के अनुसार लिखते हैं कि हम तो बैठे रहते और गुरू के आवाज देने पर बिल्कुल भी उठकर न जाते।

फिर वे लोग दूसरी यह बात लिखते हैं कि गुरू जी पाँचों सिक्खों को तम्बू में ले गए जहाँ पर कि बकरे बांधे हुए थे। ये तथाकथित इतिहासकार लोग इस प्रकार की कमजोर बातें लिखते हैं जो कि हमारे निश्चयों को ही हिलाकर रख देती हैं। साधु संगत जी! गुरू तो मारने व जीवित करने में पूर्ण समर्थ हुआ करता है। उसके लिए यह कोई कठिन काम नहीं हुआ करता है। अतः मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि उस समय बारी-बारी से पाँच गुरसिक्ख उठे और गुरू जी ने सबके सामने उनके शीश ले लिए। उसके बाद औरंगजेब के जासूस ने, जो डायरी भेजी उसके अन्दर लिखा है कि गुरू की माँग से मैं बहुत भयभीत था कि यदि कहीं गुरू नीचे ही उतर आया तो कहीं मेरी ही बारी न आ जाए। मैं दौड़ने के लिए तैयार भी था, मैंने यह देखा कि पाँचों सिक्खों के शीश धड़ों से अलग थे लेकिन उसके बाद गुरू ने कोई कलाम पढ़ी कुछ जल छिड़का उसके बाद उनके शीश धड़ों के साथ जुड़ गए, मैं यह भी नहीं कह सकता हूँ कि उसी धड़ के साथ वही सिर जुड़ा है, या फिर किसी भी धड़ के साथ कोई भी सिर जुड़ गया है लेकिन जिसके साथ भी जुड़ा वह उठकर खड़ा हो गया। यह बख्शी सिंह ने रामगढ़िया इतिहास में लिखा है। बाकी यदि हम दलील के साथ बात करें तो यह कोई विशेष बात नहीं है। ईसा जी के पास लारजेस आया। वह मरा हुआ था, उसे उठाकर ईसा जी के पास ले आए उन्होंने उस पर जल का छींटा मारा वह उठकर खड़ा हो गया।

बाबा गुरदित्ता जी के सम्बन्ध में भी एक इसी प्रकार की घटना का उल्लेख मिलता है। जब गुरू छठे महाराज जी कीरतपुर साहिब आए तो वहाँ पर उन्होंने शस्त्र रख दिए कि अब हमने युद्ध नहीं करने हैं। बाबा गुरदित्ता जी शिकार के लिए चले गए और वहाँ पर एक गाय घूम रही थी और वह चितकबरे रंग की थी। बाबा जी ने उसे चीता समझकर उस पर बाण चला दिया। जब उसे बाण लगा तो उसकी आँतें निकलकर बाहर गिर गईं, उधर पहाड़ियों ने शोर मचाना शुरू कर दिया और वे कहने लगे कि हमारी गाय को जिन्दा करो। वे कहने लगे कि पहले भी हमारे साथ ऐसा ही एक वाकिया हो चुका है। जब बाबा अटल जी ने बाबा मोहन जी को जिन्दा कर दिया था, तो उन्हें जाना पड़ गया था। लेकिन वे पहाड़ी कहने लगे, या तो हमारी गाय को जीवित करो अन्यथा हम लोग राजा के पास शिकायत करेंगे। बाबा गुरदित्ता जी कहने लगे कि यदि फौज आ गई तो उनके साथ युद्ध करना पड़ेगा लेकिन महाराज जी ने तो शस्त्र रख छोड़े हैं, अतः इस समय अच्छा यही है कि गाय को जीवित कर दिया जाए। अतः उसने जब वाहिगुरू कह कर जल का छींटा मारा तो गाय उठकर खड़ी हो गई। अब जो आंतें बाहर निकल गर गिर गई थीं, वे न जाने कहाँ चली गईं और जख्म का भी नामोनिशान न रहा, अतः वह पूर्णरूपेण पूर्ववत हो गई। इस प्रकार की घटनाओं के जिक्र लगभग सभी धर्मों के अन्दर आतें हैं।

एक बार गुरू तीसरे महाराज जी ब्रह्मवेला में जब समाधिस्थ होने लगे तो एक वृद्धा के रोने की आवाज सुनाई

देने लगी। श्री गुरू जी ने एक सेवादार को भेजा जाओ पता करो कि इस समय ब्रह्ममुहुर्त में कौन रो रहा है? सेवादार ने लौटकर बतलाया कि महाराज जी! एक ब्राह्मण विधवा स्त्री है उसका इकलौता पुत्र परलोक गमन कर गया है, इसलिए वह रो रही है। महाराज जी कहने लगे, जाओ उसे कहो कि वह रोए नहीं और उस लड़के को यहाँ ले आओ। जब वह वृद्धा अपने बेटे को गुरू जी के पास लेकर आई तो महाराज जी कहने लगे, बेटा! उठकर खड़े हो जाओ। वह लड़का उठकर खड़ा हो गया। साथ ही आपने यमराज को कह दिया कि हमारे जीवनकाल में यहाँ पर काल को नहीं भेजना यानि कि जब तक हमारा शरीर है, तब तक किसी की भी मृत्यु नहीं होनी चाहिए। अतः जब तक आपका शरीर रहा तब तक आबादी में वृद्धि ही होती रही और किसी की भी मृत्यु नहीं हुई।

साधुसंगत जी! ये सब यूँ ही अलंकारिक बातें नहीं हैं, बल्कि जो समर्थ पुरुष होते हैं, वे जो भी चाहें कर सकते हैं।

नामदेव जी के पास एक महिला आई जिसका पति मर चुका था और उसका अन्तिम संस्कार करने के लिए लेकर जा रहे थे। जब उस महिला ने भक्त जी के चरणों पर नमस्कार की तो उस समय आप बन्दगी कर रहे थे आपने अपने नेत्रों को थोड़ा सा खोला तथा सहज स्वभाव कह दिया, जीती रहो सुहागिन! वह सयानी थी, कहने लगी, महाराज जी! मेरा सुहाग तो अर्थी पर पड़ा है। उस महिला ने अर्थी को महापुरुषों के चरणों में मंगवा लिया। वह कहने लगी कि सन्त जी का वचन हो गया है वह अवश्य ही पूरा होगा क्योंकि वे जो कुछ भी कह दें वह पूरा हो जाया करता है। उस समय नामदेव जी कुछ परेशानी में आ गए कि अब क्या किया जाए? उसके बाद उन्हें अपने अन्दर से ही आवाज आई कि नामदेव! परेशान क्यों होते हो? राम कहते हुए उसका कन्धा पकड़ कर उठा दो। नामदेव ने ऐसा ही किया फलस्वरूप वह जीवित हो गया।

उधर सलेमशाह बादशाह ने विवाद खड़ा कर दिया उसने अपनी मृत गाय को आगे कर दिया कि इसे भी जीवित करो।

अतः ये सारी बातें यूँ ही नहीं हुआ करती हैं सारे धर्मों में इस प्रकार की बातें होती रही हैं। गुरमति के अन्दर तो इस प्रकार की बहुत सारी बातें हुई हैं।

श्री गुरू नानक देव जी यमुना के तट पर बैठे हुए हैं, वहाँ पर पास में ही एक हाथीखाना था। वहाँ पर एक हाथी मर गया, उस हाथी का महावत रोने लग पड़ा। महाराज जी ने कहा मरदाना! देखो कौन रो रहा है? उसने पता करके बताया, महाराज! एक हाथी मर गया है, इसलिए उसका महावत रो रहा है कि मेरा तो यही एक हाथी था, इसीके द्वारा मेरा रोजगार चल रहा था। अब मैं बेरोजगार हो जाऊँगा क्योंकि मेरा हाथी मर गया है और मुझे राजा ने नौकरी से निकाल देना है। महाराज जी बोले, मरदाना! उसे कहो कि हाथी मरा नहीं है बल्कि वह तो जीवित ही है। भाई मरदाना ने जाकर महावत को चुप करवाते हुए कहा कि तुम्हारा हाथी मरा नहीं है बल्कि वह जीवित ही है। वह बोला, नहीं वह तो मर गया है। मरदाना ने कहा, आप जाकर देखो तो सही गुरू-पीरों के वचन निरर्थक नहीं हुआ करते हैं। जब उसने जाकर देखा और हाथी को पैर मारा तो वह उठकर सचेत हो गया। जब दिल्ली के बादशाह के पास खबर पहुँची तो वह स्वयं आया और कहने लगा, पीर जी! मैंने यह सुना है कि तुम्हारे कहने से हाथी जीवित हो गया है? अब तुम पुनः इसे मार कर जीवित करके दिखाओ? गुरू जी कहने लगे, बादशाह! यह मारना व जिन्दा करना परमेश्वर के अधिकार क्षेत्र की बात हुआ करती है, दरवेश लोगों की तो दुआएँ ही होती हैं। यह तो पहले ही मरा हुआ था, मैंने इसे क्या मारना है? गुरू जी के मुख से जैसे ही यह शब्द निकला तो वह हाथी धड़ाम से नीचे गिर गया। बादशाह कहने लगा, पीर जी! अब इसे पुनः जिन्दा करो। गुरू जी बोले, अब नहीं हो सकता है।

परमेश्वर की बात को दरवेश सम्भाल लिया करते हैं, लेकिन दरवेशों की बात को परमेश्वर नहीं सम्भालता है। यथा–

मेरी बांधी भगतु छडावै
बांधै भगतु न छूटै मोहि॥
एक समै मो कउ गहि बांधै
तऊ फुनि मो पै जबाबू न होइ॥ *अंग - 1253*

इस प्रकार यह एक निर्मूल सी आवाज चलती जाती है कि गुरू जी उन सिक्खों को अन्दर ले गए और वहाँ पर बकरा काट डाला, बकरा काटने की आवाज आई किसने सुनी थी, वह आवाज? बकरा काट कर देख लो, आवाज तो आती ही नहीं है? और फिर इतनी ऊँचाई से तो बकरा गिरेगा नहीं

जिससे कि गिरने की आवाज आ जाए। सभी लोग तो वहाँ पर डरे हुए बैठे थे।

अत: इस प्रकार के बेशुमार उदाहरण हैं। इसी प्रकार गुरू सातवें महाराज जी के पास एक ब्राह्मण के मृत लड़के को लेकर आ गए और उसे जीवित करने के लिए बार-बार विनती करने लग पड़े क्योंकि यह धीरमल की साजिश थी। उसने सोचा कि यदि वे जीवित करेंगे तो गुरू छठे महाराज जी की अवज्ञा होगी क्योंकि उन्होंने मना किया हुआ है और बाबा गुरदित्ता जी को अपने शरीर का परित्याग करना पड़ा था। दूसरी तरफ यदि नहीं करेंगे तो बदनामी होगी। उस समय महाराज जी कहने लगे कि ऐ मसन्दजनो! यह सवाल तुम लोगों ने अनावश्यक रूप से खड़ा कर लिया है लेकिन यदि तुम लोग इसे जीवित करना ही चाहते हो तो फिर तुम लोगों में से कोई भी अपनी जान इसमें डाल दे। यह जवाव सुनकर सबने अपनी गर्दनें झुका लीं। भाई जीवन, वहाँ पर बैठे थे, आप उठकर वहाँ से चले गए और आपने जाकर कुशा का आसन बिछाया और उस पर लेटकर अपने शरीर का परित्याग कर दिया। उधर ब्राह्मण का लड़का जीवित हो गया। गुरू जी कहने लगे, देखो! मेरा कौन सा प्यारा बेटा चला गया है जिसने इसे जीवित कर दिया है? जब उन्होंने जाकर देखा तो कहने लगे, महाराज! भाई जीवन चला गया है। गुरू जी बोले, तुम लोगों की निम्न वृत्ति ही रही क्योंकि तुम लोगों ने मेरे इतने प्यारे पुत्र को मारकर इस ब्राह्मण के लड़के को जीवित कर दिया।

इस प्रकार से अनन्त मिसालें हैं। बाबा फरीद जंगल के अन्दर बैठे हुए हैं, ऊपर वृक्षों पर बैठे हुए पक्षी बहुत शोर कर रहे हैं। आपने कह दिया चिड़ियो! मर जाओ! सारी चिड़ियां मर गईं। इसके बाद उन्हें ख्याल आया कि मैंने तो यूँ ही चिड़ियां मार डालीं हैं। इसलिए आपने कह दिया कि चिड़ियो! उड़ जाओ! सारी चिड़ियां उड़ गईं।

गुरू दसवें महाराज जी चले जा रहे हैं, जब आप एक स्थान पर पहुँचे तो एक गुरसिक्ख से एक कबूतर मर गया। भाई मान सिंह के हाथों वह कबूतर मरा था। वहाँ के लोगों ने विवाद खड़ा कर लिया और सिक्खों को घेरा डाल लिया। महाराज जी को वहाँ पर जाना पड़ा। महाराज जी कहने लगे, तुम लोग क्या कर रहे हो? वे कहने लगे, इन्होंने कबूतर मार दिया है। गुरू जी बोले, यह तो परमेश्वर का हुक्म ही हुआ करता है, जब तक उसका हुक्म नहीं होता है, तब तक न तो कोई मार सकता है और न कोई मर सकता है। वे बोले, फिर तो सभी को मार दो। गुरू जी बोले, सबको ही मार देते हैं। उसी समय सारे मर गए। यह दृश्य देखकर सभी डर गए कि ये तो कोई समर्थ पुरुष आ गए हैं। उस समय सभी लोग महापुरुषों के चरणों पर गिर पड़े तथा कहने लगे, महाराज! यह तो हम गलत ही कह बैठे हैं, आप कृप्या सबको ही जीवित कर दो। गुरू जी बोले, ये तो जीवित ही हैं। इतना कहने से सारे कबूतर जीवित हो गए लेकिन उनमें से एक न हो सका। वे बोले, महाराज! एक नहीं हुआ? महाराज जी ने कहा, इसकी मृत्यु का समय आ चुका था।

श्री दशमेश जी ऐसे नहीं थे कि वे कुछ कर नहीं सकते थे, यह तो इतिहासकारों की विडम्बनाएँ हैं कि उन्होंने हमारे निश्चयों को कमजोर करने के लिए इस प्रकार की बातें लिख डालीं हैं।

वर्तमान समय से सम्बन्धित मैं आपको बताता हूँ। डा. स्वामी राम जी द्वारा लिखित लेख आत्म मार्ग पत्रिका में आते हैं। उनकी एक पुस्तक है, हिमालय के सन्तों के संग निवास। उसमें उन्होंने लिखा है कि मैं वेदान्त की किताब पढ़ा रहा था कि वहाँ पर एक साधू आ गया। जब मैं अपना लैक्चर दे रहा था, तो वह हँसता जा रहा था। उस समय मैंने अपनी कक्षा के विद्यार्थियों को छुट्टी दे दी तथा मैंने उस साधू को पूछा, सन्त जी! आप हँस रहे हो? वह बोला, मैं इसलिए हँस रहा हूँ क्योंकि तुम्हें वेदान्त के बारे में कुछ भी पता नहीं है। मैंने कहा मैं विद्वान हूँ, मैंने पी.एच.डी की हुई है, जर्मन व इंग्लैंड से मैंने पी.एच.डी. की हुई है, संस्कृत का प्रकाण्ड विद्वान मैं हूँ और इस सबके बावजूद आप कह रहे हो कि मुझे वेदान्त का कुछ भी ज्ञान नहीं है? मैंने कहा सन्त जी! यूँ ही किसी पर इल्जाम नहीं लगाया करते हैं। वह बोला, आओ! यहाँ पर बैठो, मैं तुम्हें समझाता हूँ। वह मुझे कहने लगा, एक लम्बा सा कोई कीड़ा पकड़ कर ले आओ! मैं एक कीड़े को पकड़ कर ले आया। उसने एक चाकू मंगवा लिया और उस कीड़े को बीच से काट डाला। काटने के बाद उन्होंने एक भाग को एक तरफ फेंक दिया और दूसरे भाग को दूसरी तरफ फेंक दिया। मैंने कहा, यह क्या हुआ? वह बोला, अभी बताता हूँ। उस समय मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब वे दोनों भाग धीरे-धीरे हिलते हुए आपस में आकर एक दूसरे से जुड़ गए और वह कीड़ा अपनी चाल से चलता हुआ आगे चला गया। परन्तु इस प्रकार की किसी

बात को यदि कोई सन्त आज से पचास वर्ष पहले कर सकता है तो क्या गुरू साहिब नहीं कर सकते थे? अतः यह जो वाद-विवाद खड़ा किया जाता है, यह सब हमें कमजोर करने के लिए ही खड़ा किया जाता है। जो सार बात है वह यह है कि महाराज जी ने उन पाँचों के शीश लिए और उसके बाद सतलुज का जल मंगवाया। उस समय दरियाओं का जल पावन हुआ करता था। अब तो सारे ही सीवरेजों को उसमें डाल दिया है, इसलिए वह जल ही पवित्र नहीं रह गया है। उस समय महाराज जी ने पाँच वाणियों का पाठ किया। उस जगह पर बाबा गुरदित्ता जी, जो कि राम कौर की सन्तान में से थे, पास में ही बैठे हुए थे। उन्होंने देखा कि दो नर चिड़ियां वहाँ पर आईं और जो पानी नीचे गिरा हुआ था उन्होंने एक-एक घूँट, उसकी भर ली। उसके बाद वे आपस में लड़ने लग पड़े और उनका खून निकलने लग पड़ा। यह देखकर आपने अनुमान लगा लिया कि यह तो कोई बहुत करारा जल श्री गुरू जी ने बना दिया है। इसलिए आप माता जीतो जी के पास पहुँच गए और विनती करने लगे कि माता जी! कोई उपाय करो क्योंकि महाराज जी ने बहुत ही तेज आभा वाला कोई जल तैयार किया है, जिसे कि जो भी पिएगा वह युद्ध करने से नहीं हटेगा। उस समय माता जीतो जी बताशे लेकर आ गए। उसे देखकर महाराज जी बोले -

भलो भयो तूं चलि करि आई।।
नीर बिखै पाई मधुराई।। *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ*

अच्छा हुआ तुमने बताशे लाकर इस जल में मिठास डाल दी है, अन्यथा इतना क्रूर खालसा बन जाना था कि जिसने प्रत्येक क्षण युद्ध के लिए तैयार ही रहना था और किसी से भी डरना नहीं था। कई लोगों के मन में ख्याल होता है कि क्या जल में भी कुछ हो जाया करता है?

मैं तुम्हें एक आपबीती सुनाता हूँ। मेरे पास एक महिला आई वह कहने लगी, भाई साहिब! मुझे आँखों से बिल्कुल भी दिखाई नहीं पड़ता है, मेरा ब्लड प्रैशर 245 है, गुर्दे के अन्दर पत्थरी है परन्तु जब मुझे आप्रेशन के लिए लेकर जाते हैं, तो उस समय मेरा ब्लड प्रैशर बढ़ जाता है, मेरी ब्लड शुगर भी 245 है, इसलिए वे मेरा आप्रेशन नहीं करते हैं और तीन चार बार मुझे आप्रेशन थियेटर से बाहर ले आए हैं, उन्होंने कह दिया है कि तुम्हारा इलाज करना असम्भव है। अगली बात है कि मेरी रीढ़ की हड्डी में फ्रैक्चर है। मेरे जिगर के अन्दर भी एक रसौली है, इस प्रकार मैं चारों तरफ से बीमार हूँ। मेरे मुँह से सहज स्वभाव निकल गया कि श्रीमती जी! तुम्हें लगभग पाँच घंटे गुरवाणी के शब्द का पाठ करना पड़ेगा। कर लोगी? वह कहने लगी, हाँ भाई साहिब जी। वह महिला पढ़ी लिखी थी और उसका बेटा थानेदार था। वह आश्रम में आ गई और मैंने उसे शबद का पाठ दे दिया। वह प्रतिदिन दो बजे से पाँच बजे तक पाठ किया करती थी। बीस दिन बाद वह मेरे पास आ गई और कहने लगी, भाई साहिब जी! मुझे आपका चेहरा दिखाई पड़ गया। मैंने कहा, क्या हुआ? वह कहने लगी जी मेरी दाईं आँख खुल गई है न जाने कब से बन्द हुई थी। मैंने कहा, ठीक है विश्वासपूर्वक लगी रहो, तुम्हारा सारा कुछ ठीक हो जाएगा। उसके बाद कहने लगी, भाई साहिब जी! मुझे पी.जी.आई जाने की इजाजत देने की कृपा करें। मैंने कहा, जा आओ। जब वहाँ पर जाकर उसने चेक-अप करवाया तो डाक्टरों ने कहा, तुम्हारा ब्लड प्रैशर और शुगर दोनों सामान्य हैं। तुमने कौन सी दवाई का सेवन किया है? गर्मियों के दिन थे, इसलिए मैंने लंगर वालों को कहा हुआ था कि भोजन के बाद गुड़ दे दिया करो जिससे कि खाना ठीक से हज्म हो जाता है। अतः उसने डाक्टरों को जवाब दिया किया कि मैं तो गुड़ वगैरह खाती हूँ और आश्रम में प्रायः लड्डू जलेबियां आती रहती हैं, इसलिए मैं वह भी खाती रहती हूँ। डाक्टर बोले, इस विधि से तो शुगर ठीक नहीं हो सकती है? वह बोली इसके साथ ही मैं पाठ करती हूँ। डाक्टर हैरान हो गए और रिपोर्ट को उन्होंने रिपोर्ट कार्ड में लिख दिया। इसके बाद मैं सितम्बर में अमेरिका जा रहा था। वह मेरे पास एक पुड़िया सी लेकर आ गई, मैंने कहा, यह क्या है? वह बोली, भाई साहिब जी! यह देखो मेरी पत्थरी भी तीन टुकड़े होकर निकल गई है, उसके बाद जब मैं यू.एस.ए. से वापिस आया तो वह कहने लगी, भाई साहिब जी! मेरी दूसरी आँख नहीं खुली है क्या मैं घर को कानी ही वापिस जाऊँगी? मैंने कहा, तुम कानी क्यों वापिस जाओगी? तुम यहाँ पर चार महीने और रहो, सेवा करो। यह बात पहली जानवरी की थी और बीस जनवरी को उसकी दूसरी आँख भी खुल गई, जो कि एक डेढ़ साल से बन्द थी तथा जिसके बारे में डाक्टरों ने कहा था कि तुम्हारी आँखों की लाइट खत्म हो चुकी है क्योंकि नाड़ियाँ दब गई हैं। वह बहुत खुश थी उसके पैर धरती से नहीं लग रहे थे। इसके बाद वह पी.जी.आई. गई और उसने कहा कि मेरी रीढ़ की हड्डी में फ्रैक्चर था उसका तो नाम निशान ही नहीं है। जिगर की रसौली भी समाप्त हो चुकी

है। इस प्रकार उसकी सारी बीमारियां ठीक हो गईं। इसके बाद वह घर जाने के लिए उतावली हो गई तथा कहने लगी मेरी पोती की परीक्षाएँ हैं, इसलिए अब मुझे घर जाने की इजाजत दें। मैंने कहा यदि तुम चार महीने और रह जाओ तो तुम्हारी आँखें बच्चों जैसी हो जाएंगी लेकिन वह जिद करके घर चली गई, इसलिए उसे डेढ़ नम्बर की ऐनक लगी।

यह बात मैंने सारे डाक्टरों के सामने कही थी जिस समय स्वामी राम जी के निर्देशन में बनने वाले 2500 विस्तरों वाले मैडिकल कालेज की नींव रखने मैं देहरादून गया था। वहाँ पर अधिकांश डाक्टर अमेरिकन ही थे। मैंने वहाँ पर 'सरब रोग का अउखदु नाम' के बारे में बताया था कि वह दवाई तुम्हारे अन्दर पड़ी हुई है।

गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई।।
गुरि पूरै संजमु करि दीआ।।
नानक तउ फिरि दूख न थीआ।। अंग - 259

जब मैं अट्ठारहर वर्ष का था तो उस समय मैं सिन्धु प्रदेश (अब पाकिस्तान में) में चला गया, वहाँ पर मुझे पुलिस की नौकरी मिल रही थी, मैंने कहा कि मैंने यह नौकरी नहीं करनी है। इसी प्रकार मैं धीरे-धीरे बाहर फार्म में चला गया और वहाँ पर भजन बन्दगी करने लग पड़ा। एक माता वहाँ पर मुझे रोज खाना दे जाया करती थी, उसने तुम्हारे बीजी को पत्र डालकर यहाँ पर बुलवा लिया तथा उसे बता दिया कि यह नौ महीने के लिए भजन बन्दगी के लिए तैयार हो रहा है, उसके बाद यह न जाने तुम्हारे पास आए या न आए, क्या करे, क्या न करे कुछ पता नहीं है, तुम इसे वापिस ले जाओ। जब यह आई तो मैंने इससे कहा कि मैंने वापिस तो जाना नहीं है क्योंकि मनुष्य जन्म बड़ी मुश्किल से मिला है। हाँ, तुम यहाँ पर रहो, सेवा करो, इन बच्चों को पढ़ाओ, मैं तुम्हें कुछ नहीं कहता हूँ। एक दिन यह हमें कहने लगी, इनका पौत्र बहुत अधिक बीमार है और इन्होंने उसे चारपाई से नीचे उतार कर रखा हुआ है। उधर यह माता तुम्हारे लिए रोज खाना लेकर आती है (आठ पहर बाद मैं एक रोटी खाया करता था) इनकी श्रद्धा टूट जाएगी। मुझे उस समय इतना पता नहीं था कि गुरवाणी के द्वारा उपचार हो जाता है। जब मैंने वहाँ पर पढ़ा तो उसमें लिखा था कि यदि अड़तालिस घंटे बैठकर साधन करें तो इस बीमारी का इलाज हो जाता है क्योंकि उसमें सिद्धि आ जाती है। फिर मैंने अपने आप को देखा कि क्या मैं अड़तालिस घंटे बैठ सकता हूँ? यदि उबासी आ जाए या गन्दी हवा आ जाए तो भी दोबारा करना पड़ना था। मैं बैठ गया और सुरति के द्वारा पाठ करने लग पड़ा क्योंकि मेरी सुरति बहुत तेज चलती थी, मैंने 34 घंटे में ही सारा पाठ कर लिया तथा उसके बाद मैंने माता को बुलवा लिया तथा यह भी कहा कि वह अकेली ही आए और उसके साथ दूसरा कोई न आए। जब वह आई तो मैंने उससे कहा, माता! जो यह जल मेरे आगे पड़ा है, इसके द्वारा लड़के का स्नान करवा दो। बच्चे की गर्दन पीछे की ओर लुढ़की हुई थी। मुझे कहने लगी, बेटा! रात में तो हम लोग सारी रात बैठे रहे अब तो कोई-कोई साँस आ रही है। मैंने कहा आप उससे स्नान करवा दो। उसके बाद मैंने कहा, अभी ठहर जाओ, मुझे अरदास कर लेने दो। मैंने अरदास की कि हे महाराज! यदि मेरे शरीर की जरूरत है तो मैं उसे भेंट करने के लिए तैयार हूँ, लेकिन तुम्हारी गुरवाणी गलत न हो जाए, इस बच्चे को जिन्दा कर दो। गुरवाणी की बदनामी को मैं सहन नहीं कर सकता हूँ। मैंने देखा कि छठी के पत्तों को फल आने लग पड़ा। मैंने कहा माता अभी नहीं जाना। फिर आधा घंटा निकल गया, तब तक वह छठी मुरझा गई। मेरे मन में आया कि मैंने एक पाप किया है, एक जान बचाने के लिए एक छठी का खून कर दिया है अर्थात इसकी जिन्दगी को बचाने के लिए मैंने छठी की बलि दे दी। इसके बाद मैंने अरदास की कि है सच्चे पातशाह! मुझसे यह भूल हो गई है मेरे अन्दर जो शक्ति आई है, मैं उसे वापिस करता हूँ तथा भविष्य में मेरे अन्दर कोई शक्ति न आए और यह माता भी भविष्य में किसी को इस घटना के बारे में न बताए तथा यदि वह बताए तो पुनः इसके बच्चे को बीमार कर देना, न तो उस महिला ने सारी जिन्दगी इस रहस्य को खोला और न ही मैंने किसी को बताया। इस समय भी मैंने इसलिए बताया है कि यह जल यूँ ही नहीं हुआ करता है कि इसमें बताशे डाल दिए और यह मीठा पानी बन गया। पाठ करने वाले की वृत्ति जितनी अधिक एकाग्र होती है, उतनी ही अधिक ऊर्जा इस जल के अन्दर प्रवेश कर जाती है और उस ऊर्जा वाले जल को जी भी पीता है उसका कायाकल्प हो जाता है।

यहाँ पर दो तीन चीजें विचारणीय हैं, एक तो यह है कि यह विश्वास की बात है, दूसरी यह है कि पिछले जमानों में हरेक ऐरे-गैरे को अमृतपान नहीं करवाया जाता था, बल्कि पहले उसे तैयार किया जाता था, यानि कि जो खालसा बनने

के लिए आता था, पहले उसे परखा जाता था। सन्त लोग छः-छः महीने पाठ करवाते रहते थे। सन्त महाराज राड़ा साहिब वाले, पहले छः महीनों तक पाठ करवाया करते थे, वे मूलमन्त्र के लाखों पाठ करवाते थे, फिर जब उसकी लगन को परख लेते थे, तो उसके बाद ही उसे अमृतपान के लिए कहते थे। इस प्रकार गुरू दशमेश जी ने बैसाखी वाले दिन ऐसी अचरज लीला की कि मृत व्यक्तियों में, जिनके अन्दर जान ही नहीं थी, उनके अन्दर अद्भुत ऊर्जा का संचार कर दिया तथा उन्हें निर्भय व निरवैर बना डाला, इसलिए जो बैसाखी का दिन है वह हमारे लिए बहुत अधिक महत्व रखता है। लेकिन हमें वास्तविकता को समझना चाहिए न कि यूँ ही अमृतपान करने की रस्म मात्र ही बना लेनी चाहिए। मैं कभी भी नहीं कहता कि फटाफट अमृतपान कर लो बल्कि मैं तो कहता हूँ कि पहले अपने आप को तैयार करो कि तुम गुरू के ऊपर पूरा विश्वास रख सकते हो? उसके बाद ही गुरू तुम्हारे ऊपर कृपा करेगा, तुम्हारा नाम भी चलेगा, सारी प्राप्तियां तुम्हें हो जाएंगी। जो लोग यूँ ही भेड़ों पर शेरों वाला रंग डालने का कार्य करते हैं, वे तो अमृत का अपमान ही करते हैं। जो अमृतपान करने का पात्र है, उसे ही अमृतपान करवाओ, उसी की कायाकल्प हो पाएगी। अतः श्री दशमेश जी ने सबको ब्रह्मज्ञानी बना दिया। उस समय जो कविगण थे, उन्होंने इस प्रकार से फुरमान किया। इस प्रकार से आप लोग पढ़ लो -

धारना - पीवहु पाहुल खंडेधार, होवे जनम सुहेला।

हरि सचे तखत रचाइआ
सति संगति मेला।
नानक निरभउ निरंकार
विचि सिधां खेला।
गुर सिमरि मनाई
कालका खंड की वेला॥
पीवहु पाहुल खंडेधार
हुइ जनम सुहेला।
गुर संगति कीनी खालसा
मनमुखी दुहेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ
आपे गुरु चेला॥ *भाई गुरदास जी वार, 41/1*

इस प्रकार का आब-ए-हयात, जिसे कि सब लोग ढूँढते थे, उसके अन्दर मनुष्य को दाखिल करवा दिया। साधुसंगत जी! इस मनुष्य के अन्दर तो अमृत भरा पड़ा है। यहाँ पर गुरू जी ने पाहुल शब्द का प्रयोग किया है लेकिन व्यक्ति को उसके बारे में पता ही नहीं है -

घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है
मनमुखा सादु न पाइआ॥
जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै
भ्रमदा भरमि भुलाइआ॥
अंम्रितु तजि बिखु संग्रहै
करतै आपि खुआइआ॥ *अंग - 644*

यह अपने अन्दर के अमृत तक तो पहुँचता ही नहीं है। गुरू जी कहते हैं कि तुम्हारे अन्दर तो अमृत का कुआँ भरा पड़ा हुआ है, तुम उसे देखो। तुम उसके पास तक यूँ ही नहीं पहुँच सकते हो क्योंकि उसका एक तरीका है। तरीका क्या है? जिस प्रकार से हम एक ट्यूबवेल लगाते हैं, और **reflex valve** के ऊपर पानी भरते हैं तथा मोटर का स्विच ऑन करके उसे ऊपर की ओर खींचते हैं। ऊपर वाले पानी को खींचने से, नीचे वाला पानी भी ऊपर खिंचता है, दोबारा पुनः पानी डाला जाता है और फिर इसी प्रकार से किया जाता है। धीरे-धीरे नीचे वाला पानी, ऊपर आ जाता है। जब पानी **reflex valve** के साथ लग जाता है यानि कि नीचे का पानी तथा ऊपर का पानी दोनों आपस में मिल जाते हैं, तो फिर मोटर के स्विच को ऑन करते ही धरती के नीचे का पानी बाहर आने लगता है। इसी प्रकार से पाँच प्यारे जब नाम देते हैं या शबद देते हैं, वाहिगुरू मन्त्र या मूलमन्त्र के लिए ताकीद करते हैं तो उस शक्तिशाली जल को जब यह व्यक्ति पीता है उसके बाद उसके अन्दर का व बाहर का पानी आपस में मिल जाता है। यही कारण था कि इस बाह्य अमृत को वैज्ञानिक ढंग से गुरू जी ने प्रयोग में सम्मिलित किया ताकि धर्म का आचरण भी खूब जोर से फलीभूत हो। उस समय गुरू महाराज जी ने सबको कहा कि देखो! एक अकालपुरुष को मानना है उसके अतिरिक्त अन्य किसी को नहीं मानना है। बाकी सबको छोड़ दो क्योंकि वे सभी परमेश्वर की ही कृति हैं। परमेश्वर के बिना अन्य किसी को भी मत मानो वही परम ज्योति है -

जिमी जमान के बिखै
समसति एक जोत है॥
न घाट है न बाढ है
न घाटि बाढि होत है॥ *अकाल उसतति*

हमने जो वाहिगुरू कहा है, वह उसी ज्योति को कहा है, जब तुमने वाहिगुरू कहना है तो उस ज्योति को ही जपना है, जिसे कि हम जागृत ज्योति कहते हैं। इस प्रकार से पढ़ लो –

धारना - जपो खालसा तुसीं जागदी जोत नूं।

जागत जोति जपै निस बासुर
एक बिनां मन नैक न आनै॥
पूरन प्रेम प्रतीत सजै,
ब्रत गोर मड़ी मट भूल न मानै॥
तीरथ दान दइआ तप संजम,
एक बिना नहि एक पछानै॥
पूरन जोत जगै घट मै,
तब खालस ताहि नखालस जानै॥

वाहिगुरू के बिना अन्य किसी को नहीं मानना है, जब तुम्हारे अन्दर ब्रह्मज्ञान की ज्योति जग पड़ेगी तो फिर तुम्हें कण-कण में परमेश्वर दिखाई पड़ने लग जाएगा और उस समय तुम खालसा पद को प्राप्त कर लोगे। केवल लिखने मात्र से ही खालसा नहीं बन जाता है कि अमुक सिंह खालसा। खालसा एक आदर्श है –

आतम रस जिह जानही सो है ख़ालस देव॥
प्रभ महि, मो महि, तास महि, रंचक नाहन भेव॥

जब सारी सृष्टि में एक ही परमेश्वर दिखाई देने लग पड़े तो उस समय **'He is called Khalsa'** उस समय उसकी पदवी कितनी है? गुरू जी कहते हैं कि मुझमें, खालसा में तथा परमेश्वर में कोई भेद नहीं है। अतः इतनी बड़ी पदवी पर गुरू जी ने एक आम मनुष्य को पहुँचा दिया और उसके बाद कहा कि ऐ परम प्यारे गुरसिक्खो! अब मुझे भी अमृतपान करवा दो। यह एक नवीन बात थी। इस प्रकार गुरू जी ने खालसा को निर्भय तथा मानवी अधिकारों का रक्षक बना दिया और इसके सिर पर बहुत बड़ी जिम्मेवारियां आ गईं। बहुत लम्बे समय तक यह संस्था सही अर्थों में चलती रही और अब क्या है? अब तो मैं कह नहीं सकता हूँ। अब तो आप सभी जानते ही हो। कहीं-कहीं पर आदर्श तरीका चल रहा है और कहीं-कहीं पर नहीं चलता है। मैं एक उदाहरण के द्वारा स्पष्ट करने की कोशिश करता हूँ।

भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी ने 'रंगले सजण' नामक पुस्तक में एक घटना का जिक्र किया है, जिसे कि मैं पाठकों की सेवार्थ उद्‌धृत करना चाहूँगा। वे लिखते हैं कि हम लोगों ने खालसा कालेज लुधियाना में अमृतपान करवाना था। अब वहाँ पर चार सिंह तो आ गए लेकिन पाँचवा नहीं आया। अब उस समय गुरसिक्ख लोग समझ जाया करते थे। ऐसा नहीं था, उन्हें कुछ पता ही नहीं चल पाता था, वे बहुत दूर तक की बातों को जान जाते थे। मुझे भी उनकी अवस्था के बारे में बहुत कुछ पता है। इस प्रकार वे अपने साथियों से कहने लगे कि तुम लोग अरदास करो पाँचवा सिंह आ रहा है। जिस समय अरदास सम्पन्न हो चुकी और जब उन्होंने पीछे मुड़कर देखा तो पीछे, तुम्हारे बीजी के पिता जी (सन्त माता रणजीत कौर जी के पिता जी) खड़े हुए थे। भाई साहिब जी कहने लगे, आप विलम्ब से पहुँचे? वे बोले आपने सन्देश ही विलम्ब से दिया था, इसीलिए विलम्ब हो गया। अब वाहिगुरू ही जाने कि इसमें क्या रहस्य था? क्योंकि उस समय के जो गुरसिक्ख थे वे एक कदम आगे बढ़ाकर ही कहीं से कहीं चले जाया करते थे। बाबा ज्वाला सिंह जी हरखोवाल वाले कोठा गाँव गए। जब बाहर आए तो निहंग टहल सिंह उनका हुजूरी सेवादार ड्यूटी पर खड़ा था। वह बहुत ही सख्त स्वभाव वाला था। बाबा जी कहने लगे टहल सिंह! अपनी बाँह पकड़ाओ, आओ चलें! बाँह पकड़ कर जैसे ही बाबा जी के साथ उसने कदम बढ़ाया तो वह हैरान हो गया कि हम लोग कहाँ पर आ गए हैं क्योंकि न तो वहाँ पर कुआँ है, न वह कीचड़ वाली जगह है। हम लोग तो कोठा में थे। दोनों जगहों में जालीस मील का फर्क है। दरअस्ल वहाँ पर करतार सिंह नाम का उनका एक श्रद्धालु निवास करता था जिसे कि आपने वचन दिया हुआ था कि तुम्हारे अन्तिम समय में हम तुम्हारे पास होंगे। आपने फटाफट उसके घर जाकर उसके शीश को अपनी जाँघ पर रख लिया। उसे दस बार वाहिगुरू-वाहिगुरू कहलवाया आर जब वह परलोक गमन कर गया तो उसके शरीर का संस्कार अपनी देखरेख में करवाया। जब उसका संस्कार हो गया तो आप वहाँ पर उपस्थित लोगों को कहने लगे कि अब आप लोग जाकर अलाहणीआं (किसी प्राणी के अन्तिम संस्कार के बाद गुरुद्वारा साहिब में जाकर पढ़ी जाने वाली एक वाणी) का पाठ श्रवण करो। हम अभी यहीं पर ठहरेंगे। जब सब लोग चले गए तो बाबा जी ने पुनः निहंग सिंह की बाँह पकड़ी और कहने लगे, आओ चलें! जैसे ही उन्होंने एक कदम उठाकर आगे बढ़ाया तो उसी कीचड़ वाली जगह के पास पुनः आ गए। वह हैरान हो गया कि यह क्या माजरा है?

वह इसके बारे में महापुरुषों से पूछ लेने की भी हिम्मत न जुटा सका। दूसरे दिन पारसभाग की कथा चल रही थी। उसके अन्दर एक वचन आया कि महापुरुष कई बार अपने वचन को पूरा करने के लिए शक्ति का भी प्रयोग कर लिया करते हैं, वैसे गुरसिक्खी के अन्दर शक्ति प्रदर्शन से परहेज ही करते हैं। असह्यनीय को सहन करते हैं क्योंकि सिक्खी के अन्दर यही पाठ उन्हें पढ़ाया गया है। गुरू पाँचवे महाराज जी ने असह्य को कितना सहन किया? जिस समय श्री गुरू जी गर्म दहकती दवी पर अपने पैर रखने लगे तो उस समय भाई प्राणा जी अपनी दोनों भुजाओं को उठाकर खड़े हो गए। महाराज जी कहने लगे, भाई प्राणा! अपनी बाहों को नीचे करो। क्या करने लगे हो? कहने लगा, महाराज! मैं इस दृष्य को देख नहीं सकता हूँ, इसलिए मैं दिल्ली व लाहौर को गरक कर देना चाहता हूँ। महाराज बोले, यह शक्ति तुमने किससे प्राप्त की है? वह बोला, महाराज! आपके चरणों में से प्राप्त की है। महाराज जी बोले, तो फिर क्या हम ऐसा नहीं कर सकते हैं? हम तो रजा में राजी रहने का पाठ पढ़ा रहे हैं। तुम्हें इस लीला के बारे में पता नहीं है, इसलिए तुम शान्त होकर इसे देखो। असह्यनीय को सहन करना है क्योंकि कल्युग का समय है –

नाटक चेटक कीए कुकाजा।
प्रभ लोगन कह आवत लाजा। बचित्र नाटक

श्री गुरू नौवें महाराज जी ने भी शक्ति प्रदर्शन नहीं किया। गुरसिक्ख भी नहीं करते हैं। कहीं मजबूरीवश जैसे कि बाबा बीर सिंह नौरंगाबाद वालों ने अटक दरिया को कह दिया था कि तुम रुक जाओ, शक्ति प्रयोग कर लें तो अलग बात है, अन्यथा गुरसिक्ख भी शक्ति का प्रयोग नहीं करते हैं। उस समय कोई भी उपाय नहीं था, इसलिए बाबा बीर सिंह ने कह दिया था।

एक नामधारी सिक्ख था जिसे उड़ना सिक्ख कहा जाता था। एक बार जब उसे गिरफ्तार कर लिया गया तो उसे गवर्नर के पास ले गए तथा कहने लगे, यह उड़ना सिक्ख है, यह बाबा राम सिंह के पास जाकर चिटिठ्यां लेकर आया करता है। उस समय उसे कहने लगे क्या तुम उड़ सकते हो? वह बोला, मैं कैसे उड़ सकता हूँ क्या मेरे पंख लगे हुए हैं? वहाँ पर उपस्थित डी.सी. तथा एस. पी. आदि कहने लगे हमें पता है कि तुम खड़े-खड़े गायब हो जाते हो। जब वे बहुत ज्यादा कहने लगे तो वह बोला, आप लोग क्या चाहते हो? वे बोले, हम कहते हैं कि इन हथकड़ियों व बेड़ियों में से उड़कर दिखलाओ? वह बोला, यह पड़ी हैं तुम्हारी हथकड़ियां व बेड़ियां। हमें कौन कैद कर सकता है? लो मैं चला और वह तुरन्त वहाँ से गायब हो गया।

यह आम बातें गुरसिक्खों के अन्दर हुआ करती थीं, लेकिन वे लोग तमाशा नहीं दिखाया करते थे क्योंकि गुरू महाराज जी ने इन सब चीजों से रोका हुआ कि इस प्रकार की बातें नहीं करनी हैं।

अतः खालसे का तेज बहुत बढ़ गया। गुरू महाराज जी ने एक मनुष्य के अन्दर चार आदर्श डाले। जो समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र चार भागों में विभाजित था, उनमें महाराज जी ने शूद्र को, जिसे कि पैर समझा जाता था, ऊपर कर दिया।

उलटा खेलु पिरंम दा पैरां उपरि सीसु निवाइआ।
भाई गुरदास जी, वार 1/23

आपने पैरों के ऊपर शीश झुकवा दिया। शूद्र जो कि सेवा कार्य करता था, उसे इतनी महानता दी कि इस प्रकार से पढ़ लो –

धारना – दरगह बैसणु पाईदै,
जे विच्चा दुनीआं सेव समाईऐ।

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ।।
ता दरगह बैसण पाईऐ।।
कहु नानक बाह लुडाईऐ।। अंग – 26

जो दूसरा वर्ग वैश्यों का था, उसे भी गुरू जी ने उसी एक मनुष्य में लाकर कहा कि तुमने सच्ची व सही आजीविका करनी है –

घालि खाइ किछु हथहु देइ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ॥ अंग – 1245

श्री गुरू नानक देव जी ने मलक भागो की मिठाइयां नहीं खाईं थीं, उसके माल पुए नहीं खाए थे। भाई लालो के सूखे हुए टुकड़े में से दूध की धार बहने लगी। इस प्रकार इसी मनुष्य को, जो कि अलग थलग किया हुआ था, कहा कि तुमने सेवा भी करनी है तथा सच्ची सुच्ची मेहनत भी करनी है। तीसरा जो क्षत्रिय है, उसके बारे में महाराज जी ने कहा कि जो बहादुर है वही क्षत्रिय हो सकता है, दूसरा नहीं।

पुंन दान का करे सरीरु।। अंग – 952

पुण्य-दान के शरीर के बारे में मैं एक छोटा सा उदाहरण देता हूँ। जिस समय कर्ण मर गया (वह सवा मन सोना रोज दान किया करता था) तो उस समय श्री कृष्ण जी ने अपने दोनों हाथ ऊपर उठा लिए और आप कहने लगे, आज दान का सूर्यास्त हो गया है। अर्जुन ने इस बात का ऐतराज किया। वह बोला, महाराज! इतनी प्रशंसा? श्री कृष्ण जी बोले, अजुर्न! इसके बराबर का कोई दानी नहीं है। अर्जुन बोला, महाराज! क्या सबूत है? श्री कृष्ण जी बोले, आओ चलें। दोनों ने अपने भेष बदल लिए। श्री कृष्ण जी ने वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण कर लिया। उस समय कर्ण जख्मी हालत में पड़ा हुआ था, उसके शरीर में से जगह-जगह पर खून निकल रहा था। वह वृद्ध ब्राह्मण (श्री कृष्ण भगवान) उसके पास पहुँचा और कहने लगा ऐ कर्ण! मेरा तो मुकद्दर ही खराब है क्योंकि मैं तो आज अपने दरिद्र को समाप्त करवाने के लिए तुम्हारे पास आया था और तुम तो यहाँ पर मृत्युशौय्या पर पड़े हो। मुझे तो कुछ दान दो। वह (कर्ण) बोला, यहाँ पर तो मेरे पास कुछ भी नहीं है। यदि तुम्हें मेरी आँख चाहिए, कोई हड्डी चाहिए या कोई अन्य अंग चाहिए तो ले लो, आपके लिए हाजिर है। वह बोला, कर्ण! तुम झूठ बोल रहे हो, क्योंकि तुम्हारे दांतों में सोने की प्लेट लगी हुई है। कर्ण ने कहा, ब्राह्मण देवता! मैं भूल गया, अतः मुझे क्षमा करें। मुझे एक पत्थर पकड़ा दो ताकि मैं अपना दाँत तोड़ कर तुम्हें दे दूँ। ब्राह्मण बोला मैं पत्थर क्यों पकड़ाऊँ? पत्थर वह पड़ा हुआ है, तुम स्वयं उठा लो। फलस्वरूप वह एक-एक इंच हिलता हुआ पत्थर तक पहुँचा और जब पत्थर को उठाकर अपने दाँत पर मारने लगा तो उस समय श्री कृष्ण महाराज जी ने उसकी बाँह पकड़ ली और कहने लगे, तुम धन्य हो! तुम असली क्षत्रिय हो। महाराज जी कहते हैं -

पुंन दान का करै सरीरु।।
खेतु पछाणै बीजै दानु।।
सो खत्री दरगह परवाणु।। *अंग - 1411*

खेत को पहचानना पड़ेगा कि दान कहाँ पर करना है? कहाँ पर दान सफल होगा? क्या यह दान संसार की सेवा में लग जाएगा। गुरू जी कहते हैं कि यदि इस प्रकार से खेत की पहचान करके दान करता है, तो वह बहुत अधिक फलीभूत होता है। खालसा दानी है, वह दसवाँ भाग दान करने में विश्वास रखता है। यदि सौ बोरी अनाज की हो जाए तो एक बोरी गुरू के निमित्त भेंट कर देनी चाहिए। यदि सारे खर्चे निकाल कर सौ रुपए बच जाएँ तो एक रुपया गुरू को दे देना चाहिए। अतः गुरू जी ने सहज रूप से ही सिक्ख को दानी बना जाला है। तीसरी बात सिक्ख को गुरू जी ने ब्राह्मण भी बना डाला है। गुरू कहते हैं कि ब्राह्मण वह है जो कि -

सो पंडितु जो मनु परबोधै।।
राम नामु आतम महि सोधै।।
राम नाम सारु रसु पीवै।।
उसु पंडित कै उपदेसि जगु जीवै।। *अंग - 274*

उसी एक ही मनुष्य को गुरू जी ने प्रचारक भी बना डाला है, ज्ञानी भी बना डाला है, तथा कथाकार बना डाला है। गुरू जी कहने लगे तुम्हारे बीच मिशनरी कोई नहीं होगा क्योंकि मिशनरी प्रचार को दूषित कर देते हैं, इसके विपरीत तुम्हारा जीवन ही प्रचार बनेगा। इस प्रकार से इस सारे वजूद को गुरू जी ने खालसा कहा और इसकी महानता कितनी है? इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - जाणौ प्यारिओ! मेरा रूप खालसे नूं।

खालसा मेरो रूप है ख़ास॥
ख़ालसे महि हौ करौ निवास॥ *सरब लोह ग्रंथ*

पाँचों को सामने करके कहने लगे कि अब तुम मेरा ही स्वरूप बन गए हो -

हौं भा तुमहिं सरूप।। *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ*

मैं तुम्हारा तथा तुम हमारा स्वरूप बन गए हो। अब हम लोग ओत प्रोत हो गए हैं -

ब्रहम गयान दिढ रिदै है पद अति लीनि अनूप।।
श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ

तुमने ब्रह्मगिआन का पद हासिल कर लिया है। ब्रह्मज्ञान का पद क्या होता है -

मनि साचा मुखि साचा सोइ॥
अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ॥
नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ॥ *अंग - 272*

जिसे परमेश्वर के बिना दूसरा कोई दिखाई ही नहीं पड़ता है, वह ब्रह्मज्ञानी हुआ करता है -

धारना - दूजा ना देखदे, प्रभ जी बिनु ब्रहमगिआनी।

उसके बाद आप कहने लगे, अब तुम्हें ब्रह्मज्ञान दृढ़ हो गया है।

सभिनि सुनावनि कारने ऊचे कीनि बखान।।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ

आपने बहुत उच्च स्वर में कहा ताकि सभी सुन लें। आपने कहा –

राखयो सिखी बीज जग अंगद गुरू समान।।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ

जिस प्रकार से गुरू अंगद साहिब जी ने गुरू नानक देव जी द्वारा ली गई सिक्खी की परीक्षा में से सिक्खी का बीज रख लिया था, उसी प्रकार वे इन पाँचों ने सिक्खी के बीज को रख लिया –

सभि संगति के तारिबे समरथ भे इह पंच।।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ

जिस प्रकार से मैं सबका उद्धार करता हूँ उसी प्रकार से ये पाँचों संगत का उद्धार करने में समर्थ हैं –

जानहु मोहि समान तिन भेद रहयो नहिं रंच।।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ

इनमें तनिक सा भी भेद नहीं है –

या मै रंच न मिथिआ भाखी।।
पारब्रहम गुर नानक साखी।। *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ*

श्री गुरू नानक तथा पारब्रह्म जी को साक्षी मानकर हम कहते हैं कि जो बात हमने कही है वह बिल्कुल स्पष्ट कही है। अतः इस प्रकार का पद देने के बाद आपने जो अपना तेज था, उसे खालसा के हवाले कर दिया –

धारना – दिता खालसा तैनूं तेज आपणा मैं।

खालसा अकाल पुरख की फौज॥
प्रगटिओ ख़ालसा प्रमातम की मौज॥
जब लग ख़ालसा रहे निआरा॥
तब लग तेज दीउ मैं सारा॥ *सरब लोह ग्रंथ*

इस प्रकार से बैसाखी वाले दिन यह आदर्श गुरू जी ने कल्युग के समय प्रकट कर दिया। अतः बहुत बड़ी चीज को गुरू जी ने संसार के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। उसके बाद जिस समय आप ब्रह्मलीन होने लगे तो उस समय सारे सिक्ख बन्धु उदास होने लग पड़े। आपने अपने चारों तरफ पर्दा करवा लिया तथा आप कहने लगे, ऐ मेरे परम प्यारे सिक्खो! मैं कहीं अन्यत्र नहीं जा रहा हूँ बल्कि मैं तुम्हारी सम्भाल किया करूँगा –

धारना – करांगा संभाल प्यारे सदा खालसे दी।

पंथ खालसा खेती मेरी।
करों संभालनि मैं तिस बेरी।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, अंग – 5642

मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जा रहा हूँ, बल्कि जो मेरा खालसा होगा, मैं उसकी रक्षा किया करूँगा।

एक हम लोगों की चल रही विचार बीच में ही रह गई है कि जब भाई रणधीर सिंह जी ने अमृत तैयार करने की अरदास की तो उस समय बापू जी (सन्त माता रणजीत कौर जी अर्थात सन्त महाराज जी की धर्मपत्नी के पिता जी) आ गए और अमृत का पात्र, विधिनुसार तैयार हो गया। उसके बाद जब वहाँ पर उपस्थित अमृत अभिलाषियों को अमृतपान करवाने की बारी आई तो पहले नम्बर पर बापू जी थे। अमृतपान करवाते हुए जब करतार सिंह लड़का, जो कि फलेवाल का था, सामने आया और जब बापू जी ने पाँच अंजुलियां उसके शीश में डालीं, पाँच अंजुलियां उसे पिलाईं और पाँच छींटे उसकी आँखों में मारे तथा ध्यानपूर्वक उसकी आँखों में देखा तो उसी समय उसकी समाधि लग गई। सभी हैरान हो गए जब देखा कि वह लड़का चुपचाप बैठ गया है। भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी कहने लगे, भाई साहिब जी! क्या हुआ? वे बोले, कुछ नहीं, थोड़ा जलाल में आकर छींटा लग गया है वे बोले, अब क्या होगा? बापू जी कहने लगे, यह 56 घंटे इसी हालत में रहेगा। श्री आखण्ड पाठ साहिब करना पड़ेगा, जब इसका भोग पड़ेगा, तब कहीं जाकर इसकी सुरति वापिस लौटेगी। अब उस बच्चे को उठाकर एक तरफ बैठा दिया गया। स्कूल के बाकी बच्चों को अमृतपान करवा दिया गया। दसवीं कक्षा के विद्यार्थियों को स्कूल वाले अमृतपान करने के लिए भेजा करते थे। जब सबको अमृतपान करवा दिया गया तो उस समय सारे जत्थे ने श्री आखण्ड पाठ साहिब शुरू कर लिया, जब अड़तालिस घंटे का समय हो गया तो उसके बाद कीर्तन शुरू हो गया। भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी कीर्तन कर रहे थे कि वह बच्चा हिला और हिलकर धरती के ऊपर यूँ तैरने लगा जैसे कि मछली तैरती है। भाई साहिब जी लिखते हैं वह हमारे सिरों के ऊपर से तथा वाद्यों के ऊपर से होता हुआ श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के आगे लम्बा लेट गया। बापू जी कहने लगे, भाई साहिब जी! आप लावां का कीर्तन करो क्योंकि

इसकी रूह इस समय अकाल पुरुष के द्वार पर संयोग मांग रही है। हम लोग तो शादी के समय लांवा का पाठ करते हैं लेकिन यह लांवा इसीलिए हुआ करती हैं। जब लावां का कीर्तन हो रहा था तो बच्चे के पैर धरती से नहीं लग पा रहे थे। धीरे-धीरे तेज में कमी आई और उसके पैर जमीन से लगने लग पड़े। वार्ता का तात्पर्य यह है कि यह अमृत जल कोई साधारण जल नहीं है, बल्कि अद्‌भुत शक्ति वाला जल है। लेकिन आजकल उस अवस्था वाले पाँच प्यारे मिल पाने मुश्किल हैं। उस समय तो यदि किसी को एक बार अमृतपान करवा दिया जाता था तो दोबारा कोई शराब की बोतल को मुँह नहीं लगाता था। दोबारा कोई पतित नहीं होता था। अब तो हम लोग कहते हैं कि ये तो गुरू से बेमुख हो जाएंगे इसलिए अभी इन्हें निचली श्रेणी में ही रहने दो।

अतः खालसा कोई साधारण चीज नहीं है, बल्कि यह तो श्री गुरू जी ने बहुत बड़ा आदर्श स्थापित किया है। उस आदर्श की प्राप्ति के लिए प्रत्येक बैसाखी को हम लोग एकत्र होकर उस आदर्श को दोहराते हैं। श्री गुरू जी इस आदर्श के माध्यम से हमें यह शिक्षा देते हैं कि तुमने सबके अन्दर एक परमेश्वर को ही देखना है, संसार से अलग नहीं होना है, किसी को बुरा नहीं कहना है। यदि श्री दशमेश जी किसी को बुरा कहते तो औरंगजेब ने तो गुरू महाराज जी के साहिबजादों को शहीद करवाया था लेकिन गुरू महाराज जी क्या कर रहे हैं? आप तो उसके बेटों की लड़ाई को निपटाने के लिए बहादुरशाह को तख्त पर बिठा रहे हैं। अन्यथा आप कहते कि इनके पूर्वजों ने हमें बहुत दुखी किया है, इसलिए इन्हें आपस में लड़ लड़कर मरने दो। या फिर जिस प्रकार से आपने चारपाई के पाए में एक तीर मारा था तो आप उसे भी एक तीर मार देते। अतः ऐसी बात नहीं थी और खालसा का आदर्श बहुत ऊँचा है। उसकी पदवी के बारे में ऐसे लिखा है-

ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर॥
नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर॥ *अंग - 273*

आपने एक जीव को उठाकर परमेश्वर बना दिया, इसीलिए आपने कह दिया कि उसकी जो दृष्टि होती है वह सबके अन्दर परमेश्वर को देखती है। इस प्रकार से पढ़ लो-

धारना - सारे संसार नूं प्रभ जी दा रूप जाणिओ।

जैसे एक आग ते कनुका
कोट आग उठे,
निआरे निआरे होइ कै
फेरि आग मै मिलाहिंगे॥

आग के बीच से चिंगारियां निकलती हैं और पुनः वह आग में मिल जाती हैं -

जैसे एक धूर ते अनेक धूर पूरत हैं,
धूरि के कनूका फेर धूरि ही समाहिंगे॥

धरती पर से धूल उड़ती है लेकिन वह पुनः धरती में ही समा जाती है -

जैसे एक नद ते तरंग कोट उपजत है
पान के तरंग सबै पान ही कहाहिंगे॥
तैसे विस्व रूप ते, अभूत भूत प्रगट होइ
ताही ते उपज सबै ताही मै समाहिंगे॥ *अकाल उस्तति*

पानी के बीच से लहरें उठती हैं लेकिन वे पुनः पानी में ही समा जाती हैं। इसी प्रकार से प्रभु जी के बीच से ही दुनिया प्रकट हुई है और वह उसी में समा जाएगी। उस समय भी वाहिगुरू सत्य था युगों के आरम्भ में भी वह सत्य था, इस समय भी वह सत्य है और अन्त में भी वह सत्य होगा। यहाँ वाहिगुरू के बिना अन्य कोई है ही नहीं -

एह विसु संसारु तुम देखदे
एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ।।
अंग - 922

कतहूं सुचेत हुइकै
चेतना को चार कीओ,
कतहूं अचिंत हुइकै
सोवत अचेत हो।
कतहूं भिखारी हुइकै
मांगत फिरत भीख
कहूं महां दान हुइकै
मंगिओ धन देत हो।
कहूं महाराजन को
दीजत अनंत दान,
कहूं महाराजन ते
छीन छित लेत हो।
कहूं बेद रीत
कहूं ता सिउ बिप्रीत
कहूं त्रिगुन अतीत
कहूं सरगुन समेत हो। *त्वप्रसादि कबित्त*

हे प्रभु जी! मुझे तुम्हारे बिना संसार के अन्दर अन्य कोई भी दिखाई नहीं पड़ रहा है। इस संसार के अन्दर केवल तुम्हीं हो। तुम्हीं कहीं पर सगुण रूप में अपनी क्रीड़ा कर रहे हो कहीं पर निगुर्ण रूप में अपनी क्रीड़ाएं कर रहे हो। अतः बैसाखी वाले दिन गुरू जी ने यह इतना ऊँचा आदर्श संसार के समक्ष प्रस्तुत किया जिसने कि संसार का काया कल्प करके रख दिया। यह सारा आदर्श श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर विद्यमान है। यदि हम श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी को सच्चे अर्थों में मानेंगे, उसकी वाणी की विचार करेंगे तो खालसा पद हमारे अन्दर आ जाएगा लेकिन यह अवस्था केवल भेष धारण करने से नहीं आ पाएगी।

खालसा भरम भेख ते रहे निआरा।

भेष धारण कर लेने से खालसा पद की प्राप्ति नहीं हो सकती है कि भेष बना लिया और खालसा बन गया।

आन्तरिक गुणों को पैदा करो, श्री गुरू जी ने गधे का उदाहरण देकर समझाने की कोशिश की है। गुरू जी ने एक गधे पर शेर की खाल डाल दी, फलस्वरूप लोग उससे डरने लग पड़े लेकिन जब गधा अपनी बोली बोलने लगा तो कुम्हार ने उसे तुरन्त ही पकड़ लिया। इसी प्रकार से भेष धारण कर लेने से लोगों को खालसा का भ्रम पड़ सकता है लेकिन यदि उसके अन्दर वही निन्दा, वही चुगली, वही वैर, वही विरोध, परमेश्वर से बेरुखी, वही माया का प्यार यदि रहता है तो वह खालसा नहीं बन सकता है। साधुसंगत जी! गुरू जी ने यह एक बहुत बड़ा आदर्श स्थापित किया है। हमें उसे समझने का यत्न करना चाहिए, आओ! हम उस आदर्श पर पहुँचने के लिए प्रभु जी के आगे अरदास करें।

(पृष्ठ 13 का शेष)

नानक भ्रम भउ कटीऐ चूकै जम की जोह।।

अंग - 256

हे प्रभु! अब मेरे मित्र वही हैं जो मुझे तेरे साथ मिलाते हैं। तोड़ने वालों से भी तू मुझे स्वयं ही बचा लेता है। अब मुझे पुत्र-कलत्र, धन बेगाने लग रहे हैं तथा तेरा प्यार ही मेरे हृदय में समाया हुआ है। मैं उन मित्रों को जिनके दर्शन करने से तेरा नाम चित्त मे आ जाये तथा दुर्भावना दूर हो जाये, संसार में ढूंढ रहा हूँ। पर मैंने देखा है कि भेषी बहुत हैं, जिनके बड़े-बड़े आश्रम हैं, बहुत बड़े-बड़े नाम हैं, लोगों से सत्कार प्राप्त करने के लिए बेअन्त प्रकार के साधनों का प्रयोग करते हैं। एक दूसरे के साथ मिलकर एक दूसरे को ऊँचा उठाने का प्रयास करते हैं, बड़े-बड़े सम्मान प्राप्त करते हैं, दुनियां उनकी स्तुति करते थकती नहीं, पर मैं हैरान हूँ कि तेरा प्यारा तो कोई भी नहीं है। ये भेषधारी भी बड़े आडम्बरों में धन प्राप्ति के लिए फंसे हुए हैं। मिला उन प्यारों को जिनके दर्शन करते ही मेरी दुर्भावना दूर हो जाये तथा मेरे अन्दर नाम की फुहार, फुव्वारे की तरह फुहारें डालें। यह मेरी प्रार्थना जरूर ही स्वीकार कर लो।

जिना दिसंदड़िआ दुरमति वंञै
मित्र असाडढ़े सेई।।
हउ ढूढेदी जगु सबाइआ
जन नानक विरले केई।। *अंग - 520*

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

जीवन मनोरथ

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥
सिमरउ जासु बिसुंभर एकै ॥
नामु जपत अगनत अनेकै ॥
बेद पुरान सिंम्रिति सुधाख्यर ॥
कीने राम नाम इक आख्यर ॥
किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥
ता की महिमा गनी न आवै ॥
काँखी एकै दरस तुहारो ॥
नानक उन संगि मोहि उधारो ॥ 1 ॥
सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ अंग - 263

गुरू दरबार के अन्दर सुशोभित हुई, परम सम्माननीय व गुरू प्यारी साधु संगत जी! आओ! ख्यालों को बाहर जाने से रोकने की कोशिश करें तथा चित्त वृत्तियों को एकाग्र करते हुए रसना की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करें जी! 'सतिनाम श्री वाहिगुरू'। गुरू महाराज जी की हम सभी पर अपार कृपा हुई है क्योंकि हमें सत्संग की प्राप्ति हो रही है और सत्संग किसे कहते हैं -

सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥
जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥ अंग - 26

जहाँ पर केवल नाम की व्याख्या की जी रही हो वही सत्संग कहलाती है। इस प्यार भरे माहौल में बैठकर उस 'परम सत्य' के साथ जुड़ना ही सत्संग कहलाता है। आज की पूर्णिमा वाले दिन, एक महात्मा ने इस धरा पर अवतार धारण किया जिसके नाम पर गौतम खानदान चला। जन्म के बाद उनका नाम सिद्धार्थ रखा गया। आपके पिता का नाम यशोदन तथा माता का नाम माया देवी था। राजघराने में आपका जन्म हुआ। पालन पोषण भी बहुत बढ़िया ढंग से हुआ जैसे कि राजकुमारों का हुआ करता है। अट्ठारह वर्ष की आयु में आपका विवाह हो गया। आप जन्म से ही बहुत गम्भीर थे। ज्योतिषों ने आपकी जन्मकुण्डली बनाई और उसमें उल्लेख किया कि यह बच्चा किसी का दुख-दर्द नहीं देख सकेगा इसलिए इसका पालन-पोषण ऐसे माहौल में किया जाना चाहिए ताकि इसके मन को किसी प्रकार की ठेस न पहुँचे।

समय बीतता गया। युवावस्था में यानि कि अट्ठारह वर्ष की आयु में आपका विवाह हो गया। उनके घर एक बालक ने जन्म लिया, जिसका नाम राहुल रखा गया। एक दिन अचानक राजकुमार सिद्धार्थ के मन में आया कि मैं भी किले में से बाहर निकल कर बाहर की दुनिया को देखूँ। आपका सारथी (रथवान) जो था उसका नाम था चन्ना, उसे बुलाया और वह बाहरी दुनिया को देखने के लिए चल पड़ा।

जब यह रथ पर बैठ कर रास्ते में जा रहा है तो रास्ते में इसे एक ऐसा रोगी मिला जो कि किसी के सहारे से चल रहा था और बहुत ही दुखी अवस्था में था। इसने अपने सारथी चन्ना को पूछा, यह कौन है? उसने बतलाया कि यह रोगी है। उसने पुनः पूछा, रोग कैसे आ जाता है? चन्ना जो था वह महापुरुषों की संगत करने वाला था। उसने कहा सिद्धार्थ! यह संसार तो वास्तव में दुखों का घर ही है। इसलिए यहाँ पर तो प्रत्येक मनुष्य रोगी ही है जैसे कि गुरवाणी का फुरमान है -

जो जो दीसै सो सो रोगी ॥
रोग रहित मेरा सतिगुरु जोगी ॥ अंग - 1140

यहाँ तो जो भी दिखाई दे रहा है, वह रोगी ही है, केवल सतगुरू ही है जो कि रोग रहित है।

अतः वह सारथी सयाना था, वह कहने लगा, सिद्धार्थ जी! इस सारे संसार को रोगों ने अपनी चपेट मे लिया हुआ है। राजकुमार ने पूछा, क्या प्रत्येक मनुष्य ही रोगी है? दरअस्ल राजकुमार बहुत ही गम्भीर प्रवृत्ति वाला था, इसलिए वह रोगी मनुष्य को देखकर अत्यधिक द्रवीभूत हो गया कि यह तो अत्यन्त कठिन बात है।

रोगों से मुक्ति के लिए सयाने लोग बताते हैं कि इसका उपाय केवल 'नाम' है और नाम रूपी दवाई सबके अन्दर पड़ी हुई है -

हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥
गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥
गुरि पूरै संजमु करि दीआ ॥
नानक तउ फिरि दूख न थीआ ॥ अंग – 259

सवाल यह है कि उस दवाई तक पहुँचा कैसे जाए? विद्वानजन बताते हैं कि इसके लिए नाम सिमरन और नाम सिमरन के लिए शुद्ध वातावरण की जरूरत होती है।

अब उसे शिक्षा मिल गई। कहने लगा मुझे कहाँ पर बैठना चाहिए? चन्ना कहने लगा कि जहाँ पर पीपल का वृक्ष हो वहाँ पर बैठना चाहिए क्योंकि वहाँ पर आक्सीनज की अधिकता होती है।

अब तो चलो विज्ञान ने इस बात को सिद्ध कर दिया है लेकिन उन समयों में ऋषियों-मुनियों का अनुभव हुआ करता था कि पीपल के नीचे बैठकर साधना करनी है।

जब सिद्धार्थ का रथ कुछ दूर और चला तो उसके बाद पुनः रुक गया। उसने पूछा, बन्धु! अब क्या हो गया है? रथवान (चन्ना) ने बताया कि कोई बुजुर्ग रास्ता पार कर हा है जो कि अत्यन्त धीरे-धीरे चल रहा है। यथा –

सिरु कंपिओ पग डगमगे नैन जोति ते हीन ॥
अंग – 1428

वह पैर रखता कहीं पर है और जाता कहीं पर है, यह बुजुर्ग है और इसे 'जरा रोग' लग गया है –

जब लगु जरा रोगु नही आइआ ॥
जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ ॥
जब लगु बिकल भई नही बानी ॥
भजि लेहि रे मन सारिगपानी ॥ अंग – 1159

अतः चन्ना ने बताया कि यह बुजुर्ग है यानि कि इसे बुढ़ापे ने ग्रस लिया है।

सिद्धार्थ ने पूछा, क्या यह हमारे ऊपर भी आएगा?

चन्ना ने कहा, अवश्य आएगा।

सिद्धार्थ ने पूछा, इसके बाद फिर क्या होगा?

रथवान ने बताया कि इसके बाद तो मृत्यु निश्चित है।

गुरवाणी तो इससे भी आगे के अनुभव को बतलाती है। वह कहती है कि प्रेमीजनो! यह तो पता ही नहीं है कि न जाने कब काल की गुलेल आकर लग जाए।

नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु ॥
ओह बेरा नह बूझीऐ जउ आइ परै जम फंधु ॥
अंग – 254

अब रथ आगे चला जा रहा है लेकिन कुछ दूर चलने के बाद पुनः रुक गया। सिद्धार्थ ने पूछा कि क्या हुआ? वहाँ पर एक मृतक की शवयात्रा जा रही थी, लोग मृतक की अर्थी को लिए जा रहे थे –

उसने बताया –

फरीदा दरीआवै कंन्है बगुला बैठा केल करे ॥
केल करेदे हंझ नो अचिंते बाज पए ॥
बाज पए तिसु रब दे केलाँ विसरीआँ ॥
जो मनि चिति न चेते सनि सो गाली रब कीआँ ॥
अंग – 1383

हमारी आँखों के सामने कितने ही चले जा रहे हैं लेकिन हम लोग अपने मन को सांत्वना दे लेते हैं कि –

मै न मरउ मरिबो संसारा ॥ अंग – 325

बात भी ठीक है क्योंकि 'मैं' तो मरती ही नहीं है और 'मैं' दोबारा जन्म लेती ही है। यथा –

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि ॥
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि ॥
अंग – 466

हउ हउ मै मै विचहु खोवै ॥ दूजा मेटै एको होवै ॥
अंग – 943

यह जो द्वैत भाव है यह हमारी मिटती नहीं है। यह हमें बाँधकर रखती है और हम हमेशा मैं-मेरी और हंगता व ममता में फँसे ही रहते हैं। व्यक्ति कर्म करता है लेकिन कहता है कि मैं करता हूँ और बँध जाता है वैसे तो परोपकार भी बाँध लेते हैं। महापुरुष बताते हैं कि एक लोहे की जंजीर है और दूसरी सोने की जंजीर है। इसीलिए गुरवाणी का फुरमान है–

करम करत होवै निहकरम ॥
तिसु बैसनो का निरमल धरम ॥ अंग – 274

यानि कर्म करते हुए, परोपकार करते हुए या सेवा करते हुए कभी भी मैं-मैं धारण करनी नहीं चाहिए क्योंकि –

कबीर ना हम कीआ न करहिगे ना करि सकै सरीरु॥
अंग – 1367

हम लोग क्या कर सकते हैं? यह तो बस महापुरुषों की सत्ता कार्य करती है और महापुरुष कभी संसार से जाया नहीं करते हैं। यथा –

ब्रहम गिआनी सद जीवै नही मरता ॥ अंग – 273

अब सिद्धार्थ पीपल के वृक्ष के नीचे बैठा है। उसने सोचा कि यह तो परिवार का या गृहस्थ का बन्धन बार-

बार याद आता है -

पुत्र कलत्र गिरसत का फासा ॥
होनु न पाईऐ राम के दासा ॥ *अंग - 180*

बंधन मात पिता संसारि ॥
बंधन सुत कंनिआ अरु नारि ॥ *अंग - 416*

बंधन बंधि भवाए सोइ ॥
पइऐ किरति नचै सभु कोइ ॥
नचि नचि हसहि चलहि से रोइ ॥
उडि न जाही सिध न होहि ॥
नचणु कुदणु मन का चाउ ॥
नानक जिन् मनि भउ तिन्ा मनि भाउ ॥

नाउ तेरा निरंकारु है नाइ लइऐ नरकि न जाईऐ ॥
जीउ पिंडु सभु तिस दा दे खाजै आखि गवाईऐ ॥
जे लोड़हि चंगा आपणा करि पुंनहु नीचु सदाईऐ ॥
जे जरवाणा परहरै जरु वेस करेदी आईऐ ॥
को रहै न भरीऐ पाईऐ ॥ *अंग - 465*

कौन नहीं चाहता है कि मेरा कल्याण हो, यदि पुण्य करके भी हम उसके साथ बँध गए तो फिर उसका क्या लाभ हुआ? फिर तो सब कुछ शून्य हो गया। इसीलिए महापुरुषों की संगत में से हमें पता चलता है कि अपने अहंभाव को समाप्त करो और -

होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि ॥
अंग - 1102

उस समय इसकी आयु 28 वर्ष की थी। रात टिकी हुई है और इसे नींद नहीं आ रही है। घरवाली सोई पड़ी है, बच्चा लगभग एक वर्ष का है जो कि सोया पड़ा है। इसने उनकी परिक्रमा की और प्रभु चरणों में अरदास की। वैसे तो एक दिन सबने एक मुसाफिर की भांति इस संसार को अलविदा कह जाना है लेकिन जीते जी त्याग करना अत्यन्त मुश्किल कार्य होता है लेकिन यह (राजकुमार सिद्धार्थ) अपने परिवार, सारे राजभाग व सुख वैभव को छोड़कर प्रस्थान कर जाता है। रात का समय है और यह चला जा रहा है। इसे स्वयं भी पता नहीं है कि किस तरफ जाना है, लेकिन मन में वैराग्य है। दरअस्ल वैराग्य के बिना माया से मुक्ति नहीं मिलती है -

ना मै जोग धिआन चितु लाइआ ॥
बिनु बैराग न छूटसि माइआ ॥ *अंग - 329*

चाहे कहने के लिए हम कुछ भी कहते रहें और कुछ भी करते रहें -

लोक पचारा करै दिनु राति ॥
बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥
छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥
बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥
अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥ *अंग - 267*

हमारे अन्दर तो लोभ रूपी कुत्ता बैठा हुआ है, इसके अतिरिक्त अन्य विकार भी बहुत सारे बैठे हुए हैं। अब इस चक्रव्यूह में से निकलने के लिए यदि वैराग्य नहीं है तो फिर सारे उपाय निरर्थक हो जाते हैं -

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि ङिआनी धनवंत
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥
अंग - 253

पराकाष्ठा तक का सुन्दर हो, ऊँचे कुल का हो, कहने के लिए तो इन्सान है लेकिन -

बंदे से जि पवहि विचि बंदी वेखण कउ दीदारु ॥
अंग - 465

देवतिआ दरसन कै ताई दूख भूख तीरथ कीओ ॥
अंग - 358

कितना कुछ उन्होंने किया बहुत अधिक दुखों व भूखों को सहारा, तपस्या व साधनाएँ की हैं। वह सब कुछ साधना पक्ष है। इन्हें ही कर्म कहा जाता है, इसके बाद होती है - उपासना।

यहाँ पर एक महापुरुष हैं - बाबा हरप्रीत सिंह जी। पिछले दो-अढ़ाई वर्षों से वे यहाँ पर रह रहे हैं। वे इंग्लैंड से केवल एक महीने के लिए यहाँ आए थे। वैसे तो उनका उद्देश्य था कि मैं साधना करने के लिए पहाड़ों पर चला जाऊँ लेकिन वहाँ पर वर्षा पड़ गई, फलस्वरूप वे यहाँ पर आ गए। जगह ने इन्हें अपनी तरफ आकर्षित कर लिया और कहने लगे, मैंने एक महीना यहाँ पर रहना है लेकिन कई साल बीत गए हैं। न माँ को पता है, न पिता को पता है, न भाइयों को पता है लेकिन वे यहाँ पर बैठे हैं। यह प्रयोगात्मक रूप से उपासना की बात है। स्नानादि करके आप दरबार साहिब के अन्दर चले जाते हैं और सारी सफाई वगैरह करते हैं। उसके बाद -

सतिगुरु जागता है देउ ॥ *अंग - 479*

प्रत्यक्ष रूप से सतगुरू जी के आगे विनतियाँ करते हैं और पूरी तरह से उपासना करते हैं। आप बहुत ही दास्य भाव से अनुनय-विनय करते हैं कि महाराज जी! आओ! अपने सिंहासन पर बिराजमान होने की कृपा करो और प्रात: 8 बजे तक आप गुरू जी की सेवा में लगे रहते हैं, यह कितने घंटे

हो गए हैं, आप स्वयं ही हिसाब लगा लो। अतः आप लगातार गुरू जी को जागृत ज्योति समझ कर उपासना करते हैं –

जागत जोति जपै निस बासुर
एक बिनाँ मन नैक न आनै॥
पूरन प्रेम प्रतीत सजै
ब्रत गोर मड़ी मट भूल न मानै।
तीरथ दान दइआ तप संजम,
एक बिना नहि एक पछानै॥
पूरन जोत जगै घट मै
तब खालस ताहि नखालस जानै॥

इष्ट को सन्मुख रखकर, उपासना की जाती है। काफी समय पहले की बात है कि हम लोग ज्ञानी जी से गुरवाणी की शिक्षा ले रहे थे। महापुरुष हमें कहने लगे कि यह पंक्ति पढ़ो –

जो दीसै गुरसिखड़ा
तिसु निवि निवि लागउ पाइ जीउ ॥ *अंग – 763*

कहने लगे, फिर उनके चरण पकड़ो, उनके चरणों पर झुको क्योंकि चरणों की धूल पवित्र होती है।

उपासना के बाद ज्ञानावस्था आ जाती है और ज्ञान के बाद विज्ञान की अवस्था आती है। उस समय तो फिर कण-कण में उसी निरंकार के दर्शन होने लग पड़ते हैं।

इस प्रकार से सिद्धार्थ, जो कि बाद में महात्मा गौतम बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुए, ने पीपल के वृक्ष के नीचे अपना आसन लगा लिया और इतनी सख्त साधना की कि आपने अपना शरीर ही सुखा लिया जैसे कि बाबा फरीद जी ने भी वचन किए हैं कि –

फरीदा तनु सुका पिंजरु थीआ तलीआँ खूंडहि काग॥
अजै सु रबु न बाहुड़िओ देखु बंदे के भाग ॥
अंग – 1382

सन्त महाराज जी (सन्त बाबा ईशर सिंह जी, राड़ा साहिब) यह शबद उस समय पढ़ा करते थे जिस समय आप साधना करते हुए राड़ा साहिब की ढक्की में बैठे थे। आपका शरीर सूखा पड़ा है। लाइटें तो इस समय होती नहीं थीं और कोई भी रौशनी आदि का प्रबन्ध नहीं होता था। उस समय आपके नेत्रों से जल बहते-बहते चरणों तक आ जाता और आपके सारे वस्त्र भीग जाते हैं। इतना अधिक वैराग्य आपके अन्दर था। फिर आपके वैराग्य के कारण आपका तेज बेशुमार बढ़ा।

एक बार कुछ महिलाएँ विवाह के लिए जा रही थीं और उस समय लोग पैदल ही जाया करते थे। वे महिलाएँ विवाह से सम्बन्धित कुछ खुशी के गीत गाते हुए जा रही थीं। उस समय उन महिलाओं ने इस महात्मा की तरफ देखकर एक गीत गाया, जिसने कि उनके जीवन में एक महान क्रान्ति उत्पन्न कर दी। इन महिलाओं के गीत के बोल थे – फकीरा ऐसे मत करो, तन को मत सुखाओ यह तो तार है जीवन की, ऐसे तो टूट जाएगी –

नानक सो प्रभु सिमरीऐ तिसु देही कउ पालि ॥2॥
अंग – 554

इसका उपयुक्त पालन-पोषण करो जो कि इसका विधान है। तार को इतनी भी ढीली मत छोड़ो जो कि तुम्हें मंजिल पर पहुँचा ही न सके। यानि कि खा-खाकर तुम्हारा शरीर आवश्यकता से अधिक भारयुक्त ही न हो जाए। दूसरी तरफ तार को इतना अधिक कसो भी नहीं जिसके कारण यह टूट ही न जाए यानि कि शरीर को सुखा ही न लो क्योंकि यदि आत्मा ही शरीर से निकल गई तो फिर मंजिल पर कौन पहुँचेगा? यानि कि शरीर को आवश्यकता से अधिक दुख भी नहीं देना चाहिए। अब सारा सिद्धान्त उस गीत के माध्यम से प्रकट हो गया।

उस रात पूर्णिमा की रात थी। पीपल के पत्तों में से चन्द्रमा की किरणें इसके शरीर पर पड़ रही थीं। इसे अदभुत शान्ति की प्राप्ति हो रही थी। अब इसने हठ का त्याग कर दिया और परमानन्द की स्थिति में प्रवेश कर गया। इसी को बोध कहते हैं, समझ कहते हैं, ज्ञान या विज्ञान कहते हैं। बोध का अर्थ है – अहिंसावादी हो जाना और किसी को भी दुख न पहुँचाना। 'अहिंसा' जो शब्द है यह शान्ति का द्योतक है। जब इसे तत्व ज्ञान या बोध हो गया तो इसने फिर सारे तिब्बत, चीन, नेपाल व जापान आदि में दूर-दूर तक जाकर अपने विचार प्रस्तुत किए। अस्सी वर्ष की आयु तक आप प्रचार करते रहे। बड़े-बड़े राजा लोग आपके अनुयाई बन गए। अस्सी वर्ष की आयु में आपने अपने शरीर का परित्याग कर दिया।

हम लोग एक विचार को लेकर चले थे कि –

बाल जुआनी अरु बिरधि फुनि तीनि अवसथा जानि॥
अंग – 1428

अतः यह सत्संग की महिमा है क्योंकि यहाँ आकर हम सभी लोग एकत्र होकर, महापुरुषों द्वारा दिए गए पाठ को दोहराते हैं। इसके अन्दर से हमें ऊर्जा प्राप्त होती है। 'जागत जोति जपै निस बासुर' यानि कि जो दिन रात जपता है

'वाहिगुरू ... वाहिगुरू'। वाहिगुरू जी कोई इस प्रकार से नहीं हैं कि -

सुंन मंडल इकु जोगी बैसे ॥
नारि न पुरखु कहहु कोउ कैसे ॥ अंग - 685

यह तो है एक शब्द या शब्द की आवाज। जो माता जीतो जी को धन्य गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी ने उपदेश दिया था, उसे महापुरुषों ने बड़े ही विस्तारपूर्वक बतलाया था, वह 'सुरति सबदि मार्ग' पुस्तक के रूप में मौजूद है, उसमें सारी अवस्थाओं के बारे में लिखा हुआ है। उसे ध्यानपूर्वक पढ़कर देखना। क्योंकि कई बार हम लोग बस यूँ ही पढ़ जाते हैं। आप उसे विचार में लाकर देखना।

माता जी ने उस उपदेश को कमा लिया। फिर आप बहुत बड़े नाम अभ्यासी सिद्ध हुए। आप फिर त्रिकालज्ञ हो गए, फलस्वरूप आपको भविष्य के बारे में सारा कुछ पहले ही पता चल गया जैसे कि साहिबजादों की शहीदी, माता जी की शहीदी, आनन्दपुर साहिब को छोड़ना, आदि।

आप कहने लगे, महाराज जी! इस सारे समय को तो मैं देख कर सहन नहीं कर पाऊँगी, फलस्वरूप गुरू महाराज जी की आज्ञा लेकर आपने अपनी मर्जी से अपने शरीर का परित्याग कर दिया। इस आन्तरिक मार्ग पर चलते हुए जब हम तप करते हैं तो इसे 'आत्म मार्ग' कहा जाता है। जिस समय हम लोग इस पत्रिका का नाम रजिस्टर करवाने के लिए दिल्ली जाने लगे तो महापुरुषों ने हमें दस नाम दिए थे लेकिन साथ ही यह भी कहा कि नाम तो हम लोगों ने इसका 'आत्म मार्ग' ही रखना है। जब हम लोगों ने दिल्ली जाकर रजिस्ट्रार के सामने अपने सारे कागजात रखे तो सबसे पहले उन दस नामों में से रजिस्ट्रार ने भी 'आत्म मार्ग' पर ही अपना निशान लगा दिया। इधर से महापुरुषों का ख्याल बना और उधर रजिस्ट्रार के मन में प्रेरणा हो गई, फलस्वरूप इस रूहानी पत्रिका का नाम 'आत्म मार्ग' रखा गया। इसकी मंजिल है -

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ ॥
आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ ॥
अंग - 846

उस अवस्था पर पहुँचना है। टाइटल पृष्ठ इसका बहुत सुन्दर है। हम लोग जहाँ भी जाते हैं प्रत्येक कोई चाहता है कि यह हमें मिल जाए और सभी लोग इसे पढ़ना चाहते हैं क्योंकि यह सभी को आकर्षित करता है। टाइटल पृष्ठ पर गुरूओं का स्वरूप होता है और जो इसके अन्दर वचन होते हैं, वे महापुरुषों की कठिन साधनाओं के बाद उनके अनुभवों में से आए हुए होते हैं। अतः महापुरुषों की यह एक बहुत बड़ी कृपा हम लोगों के ऊपर है। चौबीस वर्षों से यह मैगजीन बड़ी ही सफलतापूर्वक चल रहा है। यदि हम लोग कहें कि हम लोग प्रचार करते हैं तो यह हमारे वश की बात नहीं है क्योंकि हम लोग तो अपना ही संवारने के काबिल नहीं हैं, दूसरों का कल्याण हम कैसे कर सकते हैं? दूसरों को क्या समझा सकते हैं? यह तो महापुरुषों की ही सब कृपा है कि उन्होंने मीडिए का प्रयोग करके संसार के कोने-कोने में इस मैगजीन को पहुँचाया जो कि हमें नाम के साथ जोड़ता है। नाम हमारे अन्दर है और 'नाम' के अन्दर हमें स्थित करवाना ही इस पत्रिका का लक्ष्य है। अब साधूजन क्या करते हैं, वे हमें नाम की दवाई देते हैं। जब हम लोग महापुरुषों की जीवन संगिनी परम पूज्या माता जी के पास जाया करते थे तो आप केवल एक ही आशीष दिया करते थे -

पूता माता की आसीस ॥
निमख न बिसरउ तुम् कउ हरि हरि
सदा भजहु जगदीस ॥ अंग - 496

अतः महापुरुषों ने हम सबको नाम की ही दवाई प्रदान की है -

नामु अउखधु मो कउ साधू दीआ ॥ अंग - 101

संतन मो कउ पूंजी सउपी तउ उतरिआ मन का धोखा॥ धरम राइ अब कहा करैगो जउ फाटिओ सगलो लेखा ॥ अंग - 614

वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतिह।

(पृष्ठ 6 का शेष)

होती है कि प्रत्येक माह गुरू साहिबान के गुरु पर्वों, भक्तों व ईश्वरीय आत्माओं के जीवन के बारे में तथा उनकी कमाई व साधनाओं के बारे में प्रकाश डालते रहें ताकि जन साधारण का उपयुक्त मार्ग दर्शन होता रहे। इस प्रकार से आने वाले समय में भी विगत 24 वर्षों की भांति आत्म मार्ग संस्था आप सबकी सेवा में तत्पर रहेगी। दोबारा आप सबको सविनम्र निवेदन है कि आत्म मार्ग पत्रिका की लाइफ मैंबरशिप व सालाना मैंबरशिप को रिन्यूवल करवा कर इसकी बुलन्दावस्था के लिए यत्नशील हो जाएँ।

आपके प्यार व सहयोग की उम्मीद में,

आत्म मार्ग संस्था।

नूरानी मिलाप - 10

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

(श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी के 550 वर्षीय प्रकाश शताब्दी को समर्पित)

मै मूरख की केतक बात है कोटि पराधी तरिआ रे॥
गुरु नानकु जिन सुणिआ पेखिआ से फिरि गरभासि न परिआ रे ॥ (अंग - 627)

सांसारिक मनुष्य को जो सत्य है, वह दिखाई नहीं पड़ता है और जो उसे दिखाई पड़ता है वह सत्य नहीं है।

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मार्च, पृष्ठ - 40)

सच्चा सौदा

बेबे नानकी जी (सतगुरू जी की बड़ी बहिन) विवाह होने के बाद घर वापिस लौटे। सारा परिवार इकट्ठा होकर पारस्परिक वातार्वलाप कर रहा है। बाबा मेहता जी ने यह बात चलाई कि बेटा नानकी! मैं कब तक घर के कार्यों में खपता रहूँगा? नानक जी अब परमात्मा की कृपा से बड़े हो गए हैं, इसलिए अब इन्हें घर की जिम्मेदारियों को सम्भालने की प्रेरणा करो। पिता जी, अभी नानक जी के रूहानी मूल्यों से अनभिज्ञ थे क्योंकि परमात्मा ने स्वयं ही उन पर माया की अज्ञानता डाली हुई थी जिसे कि परमात्मा ने पिता जी के शरीर के अन्तिम दिनों में ही दूर करना था इसलिए आप अभी इस भ्रम में ही हैं कि नानक भी एक आम साधारण और सांसारिक पुत्र की भांति ही हैं। घर की जिम्मेदारी की तो क्या बात है ये तो करोड़ों ब्रह्मांडों के मालिक हैं। सारे संसार की जिम्मेदारी इनके सिर पर है। सारी मानवता इनकी अपनी है। इन सारी सच्चाइयों से अनभिज्ञ पिता जी ने यह सुझाव दिया कि यदि ज्यादा कुछ नहीं तो ये कोई छोटी-मोटी दुकान ही कर ले ताकि किसी न किसी कार्य में इसका मन तो लगे।

बड़ी बहिन जी की प्रेरणानुसार सतगुरू जी ने फुरमान किया कि बेबे जी! पिता जी की आज्ञा तो मेरे लिए सिर माथे पर है, इसलिए वे जो भी हुक्म करें मैं उसे मानने के लिए तैयार हूँ। परमात्मा के हुक्म में राजी रहने वाले नानक जी भला पिता जी के हुक्म को कैसे मना कर सकते थे?

गुरू जी को आज्ञा का पात्र जानकर तथा अपने अनुसार सही दिशा की तरफ जाते हुए देखकर पिता जी ने प्यारपूर्वक कहा बेटा जी! माता-पिता की आज्ञा का पालन करना नेक बच्चों के हिस्से में आया करता है। यह लो बीस रुपए और चुहड़काना जाकर दुकान के लिए कुछ सौदा खरीद लाओ तथा अपने साथ में मरदाना जी को ले जाओ (कहीं-कहीं पर भाई बाला जी का भी जिक्र है)।

पिता जी का हुक्म मानकर आज्ञा की पालना करते हुए, गुरू जी, अपने साथ मरदाना जी को लेकर चूहड़काने की तरफ चल पड़े जो कि तलवंडी के नजदीक ही एक छोटा सा कस्बा था।

उधर निरंकार जी ने तो अपना दिव्य खेल करना था, जिससे कि सभी लोग अनजान थे। वास्तव में जो सांसारिक लोग होते हैं, उनकी दृष्टि सीमित होती है। उन्हें जो दिखाई देता है, वह सत्य नहीं होता और जो सत्य होता है, वह दिखाई नहीं पड़ता है। इस खरे सौदे में कौन सी लीला ने घटित होना है, इस बारे में किसी को कुछ भी पता नहीं है। किसी को क्या पता था कि इस दौरान इस प्रकार का सच्चा सौदा किया जाएगा, जिसे कि सारी दुनिया में याद किया जाएगा और इस सौदे से एक परिवार नहीं अपितु परमात्मा का सारा परिवार, यानि कि सारा संसार ही लाभ उठाएगा। इस सौदे के माध्यम से लंगर-प्रथा की ऐसी नींव रखी जानी है जिसे ग्रहण करके सारी दुनिया ने तृप्त हो जाना है। वास्तव में यह उस सच्चे का सच्चा सौदा था।

आप जी मरदाना समेत चूहड़काना कस्बे के नजदीक पहुँचे ही थे कि आपको एक परमात्मा के रंग में रंगी हुई सन्त मण्डली के दर्शन हुए। वहाँ पर लंगोटाधारी नांगे साधू एक धूनी के चहुँओर भजन-बन्दगी में लीन थे। मुखी सन्त रेण जी के पास बैठकर गुरू जी ने सम्मानपूर्वक पूछा कि हे सन्तजनो! आप लोगों के शरीर पर वस्त्र क्यों नहीं हैं और शरीर को देखने से यह पता चलता है कि आप लोग भूखे भी हो। क्या आप लोगों के पास वस्त्र ही नहीं हैं या फिर

आप लोग जानबूझकर पहनते ही नहीं हो?

सन्त मण्डली के मुखी सन्त रेण जी ने मीठी भाषा में जवाब देते हुए उत्तर दिया कि ऐ प्रभु-भक्त! जिस वस्तु के बिना हमारा काम वैसे ही चल सकता है तो उस चीज की हम लोग इच्छा ही नहीं करते हैं। अतः हमें वस्त्रों की जरूरत भी नहीं है और इनकी इच्छा भी नहीं है। भोजन की भूख तो शरीर की भूख है, बस वह पूरी हो जाए, इसके अतिरिक्त हमें अन्य कोई लालच नहीं है, वास्तव में वे सच्चे साधू थे। इच्छा और आवश्यकता में जमीन-आसमान का अन्तर है। आवश्यकता एक अलग संकल्प है, जबकि इच्छा एक दूसरा संकल्प है। हमारी आवश्यकताएँ तो पूरी हो सकती हैं लेकिन इच्छाएँ नहीं। खाने के लिए भोजनु पहनने के लिए वस्त्र तथा रहने के लिए मकान (रोटी कपड़ा और मकान या कुल्ली, जुल्ली और गुल्ली) इस मनुष्य की सांसारिक आवश्यकताएँ हैं। दरअस्ल मनुष्य की ये आवश्यकताएँ तो पूरी हो जाती हैं लेकिन हमारी इच्छाएँ उत्तरोत्तर बढ़ती ही जाती हैं। यदि हमारी इच्छाओं की पूर्ति होने लगती है तो फिर तृष्णाएँ जन्म ले लेती हैं और यदि इच्छाएँ पूरी नहीं होती हैं तो फिर चिन्ताएँ जन्म ले लेती हैं जैसे कि गुरवाणी का फुरमान है -

त्रिसना बिरले ही की बुझी हे ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
कोटि जोरे लाख क्रोरे मनु न होरे ॥
परै परै ही कउ लुझी हे ॥ *अंग - 213*

जिउ पावकु ईधनि नही ध्रापै ॥ *अंग - 280*

अतः मुखी साधू यानि कि सन्त रेण जी ने निरिच्छत होते हुए अपने विचारों को प्रकट किया।

अन्तर्यामी सतगुरू जी ने बात को आगे बढ़ाते हुए प्रश्न किया कि आप जी ने भोजन ग्रहण किया है? सन्त रेण जी ने उत्तर दिया कि तीन दिन पहले ग्रहण किया था। गुरू जी ने अगला प्रश्न किया कि फिर आप नगर में भोजन माँगने नहीं गए?

परमात्मा के रंग में तथा उसके विश्वास से लबालब भरे हुए सन्त रेण जी ने उत्तर दिया कि हम लोग माँगने इसलिए जाएँ यदि परमात्मा को हमारा फिक्र ही न हो। जब वह भोजन भेजेगा तो उस समय हमें प्राप्त हो जाएगा। इस प्रकार परमात्मा पर विश्वास को प्रकट करते हुए उस मुखी सन्त रेण जी ने उत्तर दिया।

वास्तविकता यह थी कि उन साधुओं का भाग्योदय हो चुका था क्योंकि जिस परमात्मा पर विश्वास रखकर वे भजन-बन्दगी कर रहे थे वह परमात्मा साकार रूप में उन्हें सामने दर्शन प्रदान कर रहा था। उसी समय सतगुरू जी चूहड़ाकाना की मण्डी में गए और भोजन सामग्री लेकर उनके पास लौट आए और उन सन्तजनों को भोजन ग्रहण करवाया। जिस समय नानक जी (गुरू जी) उस मण्डली को भोजन वितरित कर रहे थे तो उस समय एक अन्य घटना भी घटित हुई। दरअस्ल उस समय सन्त मण्डली ऊँची जगह पर विराजमान थी जबकि सतगुरू जी नीची जगह पर खड़े होकर भोजन वितरित कर रहे थे। मुखी सन्त रेण जी के अन्दर यह समझ उत्पन्न हुई कि हम लोगों को नीचे साधारण रूप से बैठकर भोजन ग्रहण करना चाहिए। उनके साथी साधुओं ने पूछा कि महात्मा जी! क्या हुआ? इसकी रहस्यात्मक बात क्या है? सन्त रेण जी बोले, सन्तजनो! इनके दर्शनों को हम लोगों को बार-बार बलिहार जाना चाहिए। इनके दर्शन करके तो आन्तरिक तौर पर शान्ति व आनन्द की प्राप्ति हो रही है तथा इनके चेहरे के जलाल को झेल पाना मुश्किल हो रहा है, यही सब तो रहस्यात्मक बातें हैं। हम सब लोग तो अवज्ञा कर रहे हैं। मेरी समझ से तो ये परामात्मा का नूर ही हैं। हम लोग ऊँची जगह पर बैठे हुए हैं, जबकि ये नीची जगह पर खड़े होकर हमारी सेवा कर रहे हैं। यह अवज्ञा हम लोग प्रत्यक्ष रूप से कर रहे हैं और दूसरी बात यह है कि इनके चेहरे के जलाल का सामना कर पाना कठिन हो रहा है, यही कारण है कि मैंने यहाँ से जल्दी नीचे उतरने की विचार की है। इस प्रकार से भोजन ग्रहण करके, जहाँ एक तरफ शारीरिक भूख की तरफ से तृप्त हुए वहीं दूसरी तरफ वे (गुरू) नानक जी के दर्शन दीदार करके व उनके वचन श्रवण करके आत्मिक तौर पर भी तृप्त हुए।

अब सतगुरू जी तथा भाई मरदाना जी तलवंडी की तरफ प्रस्थान कर गए। उधर अब पिता जी का सामना करने की दृष्टि से भयग्रस्त, भाई मरदाना जी ने कहा कि पिता जी ने तो हम लोगों को व्यापारिक दृष्टि से सौदा खरीदने के लिए धनराशि प्रदान की थी, लेकिन हम लोगों ने क्या किया? (गुरू) नानक देव जी बोले, प्यारे मरदाना जी! पिता जी ने हम लोगों को खरा सौदा करने की ताकीद की थी, लेकिन इस प्रकार की ईश्वरीय रंग में रंगी हुई रूहों को भोजन ग्रहण करवाने की अपेक्षा और कौन सा सौदा खरा हो सकता है? मरदाना ने कहा, महाराज जी! आपकी बातें आप ही जानो। गुरवाणी के अनुसार -

आपे हरि इक रंगु है आपे बहु रंगी ॥
जो तिसु भावै नानका साई गल चंगी ॥

अंग - 726

मुझे तो बस पिता जी से डर लग रहा है कि जब हम लोग घर जाएँगे तो वहाँ पर क्या बनेगा? वहाँ हम लोग क्या मुँह दिखलाएँगे?

पिता जी के नाराज होने का कारण गुरू जी को भी भली प्रकार से पता था लेकिन आपने मानवता को एक नया पाठ भी दृढ़ करवाना था कि परोपकारवश अपने ऊपर दुखों को झेलना भी ईश्वरीय कृपा का पात्र बनना ही होता है। अतः मरदाना जी को घर की तरफ भेजकर, गुरू जी स्वयं जंगल में जाकर वृक्षों की सघन छाया में बैठकर, उस परम प्यारे की याद में समाधिस्थ हो गए।

भाई मरदाना जी से घटना की सारी जानकारी लेने के बाद पिता जी का गुस्से में आना स्वाभाविक ही था। क्रोधावेश में आए हुए पिता जी तेजी से बाहर की ओर चल पड़ते हैं। आपके पीछे-पीछे बेबे नानकी जी भी चल पड़े कि कहीं पिता जी कोई अवज्ञा न कर दें यानि कि मेरे प्रभु-स्वरूप भैया जी के ऊपर पिता जी कहीं हाथ ही न उठा दें क्योंकि बेबे नानकी जी पिता जी के स्वभाव से भली भांति परिचित थे। यही कारण था कि बेबे जी (बहिन नानकी जी) किसी भी असामान्य स्थिति को रोकने के लिए पीछे-पीछे दौड़े जाते हैं। पिता जी को नजदीक देखकर सतगुरू जी उठ खड़े हुए। गुस्सा जो होता है यह बुद्धि के कार्य को बुरी तरह से ढक लेता है। बुद्धि का कार्य होता है कि वह अच्छे-बुरे व जायज-नाजायज की पहचान करे तथा सही गलत पर अपना निर्णय प्रस्तुत करे, लेकिन गुस्सा ऐसी चीज है कि वह सब कुछ को समाप्त कर देता है। अतः गुस्सा रूपी दैत्य ने पिता जी की बुद्धि पर पर्दा डाल दिया। फलस्वरूप क्रोधावेश में अपने आपे से बाहर हुए पिता जी ने ईश्वरीय नूर, शान्ति के पुंज, नूरों के नूर व प्रकाश रूप सतगुरू जी के कोमल व पवित्र मुख पर एक जोरदार चपत लगा दी। जब तक बेबे जी ने दौड़कर पिता जी की बाँह पकड़ी तब तक नानक जी की गाल पर, एक जोरदार चपत लग चुकी थी। अगली चपत न लगाने के बारे में ताकीद करते हुए बेबे नानकी जी ने दौड़कर पिता जी की बाँह पकड़ ली और अपने भैया जी (नानक जी) को बाँह से पकड़ कर घर की तरफ लेकर आते समय बेबे नानकी जी की आँखों से आंसुओं की धारा रुकने का नाम नहीं ले रही थी तथा वह कहने लगी, हे मेरे प्यारे भैया नानक जी! आप मुझे माफ करना क्योंकि मैं इस अवज्ञा को रोक नहीं सकी। अन्दर ही अन्दर अपने भैया के प्रति प्यार व अवज्ञा का प्रकटीकरण होते हुए बेबे नानकी जी वापिस घर की तरफ लौट रहे हैं।

हे परमात्मा स्वरूप भैया जी! हम लोग तो सांसारिक लोग हैं और पिता जी के ऊपर तो न जाने परमात्मा ने कौन सी माया डाली हुई है? और न जाने वे आपके रूहानी पक्ष को कब समझ सकेंगे?

सारे नगर में यह बात आग के सदृश्य फैल गई कि बाबा मेहता जी ने गुस्से में आकर सतगुरू जी को एक चपत लगाई है और यह बात घूमते-घूमते राय बुलार जी के पास भी पहुँच गई, फलस्वरूप उन्हें भी असहनीय कष्ट हुआ। वे कहने लगे ऐ खुदा! आपने यह कौन सी लीला घटित की है। उन्होंने तुरन्त बाबा मेहता जी को अपने पास बुलाया और नाराजगी प्रकट करते हुए कहने लगे कि आपने ऐसा क्यों किया? वे तो पीरों के पीर हैं तथा वे मेरे पीर भी हैं और मेरे खुदा भी हैं। मेरे तो प्राण भी वही हैं, आप उन्हें समझ नहीं सकोगे। तुम तो उन्हें केवल अपना पुत्र समझने का ही भ्रम पाल कर बैठे हुए हो जबकि वे तो सारी सृष्टि के स्वामी हैं। तुमने केवल बीस रुपए के लिए उन्हें इतनी जोरदार चपत लगाई है? यह लो अपने बीस रुपए और भविष्य में जितनी भी माया की जरूरत हो मुझे बता देना, मैं पूरी कर दूँगा लेकिन इस खुदा के नूर को कभी भी क्रोधित नहीं होना। ये चाहे कुछ भी करें। कुछ दिनों के बाद जब जयराम जी तथा बेबे नानकी जी राय बुलार जी को मिले तो राय जी ने कहा कि नानक जी को आप लोग अपने पास ले जाओ और अपने पास इन्हें रखो क्योंकि यहाँ का मौहाल अभी ठीक नहीं है। इस प्रकार से जयराम जी तथा बेबे नानकी जी सतगुरू जी को अपने साथ ले जाते हैं।

वास्तव में यही खरा सौदा था, जिसे शुरू करने के लिए सतगुरू जी को स्वयं भी पिता जी के गुस्से का शिकार होना पड़ा था। यही गुरू के लंगर का आरम्भिक दौर था।

आज उस सच्चे सौदे के कारण ही एक नहीं अपितु लाखों जरूरतमन्द लोग गुरू घरों में लंगर ग्रहण करके अपनी भूख की तृप्ति करते हैं। अतः अच्छा कार्य या परोपकार का कार्य करते हुए यदि हमें कुछ कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ जाए तो उसे भी सहन कर लेना चाहिए और बड़ों के आगे कभी भी सिर नहीं उठाना चाहिए। बड़ा भाई भी पिता समान ही माना जाता है। इस विचार के माध्यम से हमें सच्चे व झूठे सौदों के बीच के अन्दर को जान लेना चाहिए और हमें सच्चे धन तथा झूठे धन के बीच के अन्तर को बखूबी समझ लेना चाहिए। इस बड़े सिद्धान्त का प्रतिपादन करने के लिए गुरू जी ने अपने आप को जोखिम में डाला, पिता जी की नाराजगी को झेला ताकि हम सब खुशगवार जीवन को व्यतीत कर सकें। हमारी खुशियों के लिए उन्होंने स्वयं दुखों को सहन किया। धन्य गुरू नानक तू ही निरंकार।

वारां भाई गुरदास
स्टीक

डा. भाई वीर सिंह जी

9. पउड़ी (न्याय)

अधोलिखित नौंवीं पउड़ी में न्याय शास्त्र का कर्ता और उसका मत उस समय का प्रचलित माना हुआ तथा किसी अन्य मत का ख्याल बतलाते हैं –

गौतम तपे बिचारिकै रिगि वेद की कथा सुणाई।
निआइ सासत्र को मथि करि सभि बिधि करते हथि जणाई।
सभ कछु करते वसि है होर बात विच चले न काई।
दुही सिरी करतार है आपि निआरा करि दिखलाई।
करता किनै न देखिआ कुदरति अंदरि भरमि भुलाई।
सोहं ब्रहमु छपाइकै पड़दा भरमु करतारु सुणाई।
रिग कहै सुणि गुरमुखहु आपे आपि न दूजी राई।
सतिगुर बिना न सोझी पाई॥

अर्थ – गौतम नामक ऋषि ने ऋगुवेद की विचार करके उसकी कथा सुना दी। न्याय शास्त्र का भली भांति अध्ययन करने के बाद उन्होंने बताया कि प्रत्येक बात व विधि ईश्वर के अधीन है। सभी बातें जैसे कि जीवों की उत्पत्ति, उनका पालन व संहार आदि उसी के नियन्त्रण में हैं, अन्य किसी के हाथ में कुछ भी नहीं है। वह ईश्वर स्वयं पाप व पुण्य से अलग रहकर प्रत्येक क्रिया कलाप को संचालित करता है। वह कर्ता स्वयं तो अदृश्य रहता है लेकिन उसने सारी सृष्टि को माया के भ्रम में भुला रखा है, सोऽहं ब्रह्म को गुप्त रखते हुए भ्रम के आवरण की बात को ऋगुवेद के कर्ता गौतम ऋषि ने सुनाया कि ऐ गुरुमुखजनो! वह तो अपने आप से ही है और उसमें तो द्वैतभाव राई के समान भी नहीं है। यहाँ पर भाई गुरदास जी अपना विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि इस बात की समझ सतगुरू के बिना किसी को भी नहीं आ सकती है।

भावार्थ – ऋगुवेद के बारे में जो कुछ अन्य मतों वाले जैसे कि आदि न्याय शास्त्र आदि वाले कहते हैं उसे पहले बताया जा चुका है। अब वे उनके निश्चय के बारे में बतलाते हैं कि गौतम ऋषि ने उल्टा ही विचार करके दो भेद कर दिए हैं कि जीव भिन्न है तथा ईश्वर भिन्न है उन्होंने 'सोऽम ब्रह्म' मन्त्र को छिपा दिया है तथा परमाणुओं से सृष्टि की उत्पत्ति को मानने का संकल्प प्रचलित कर दिया। इन सारे विचारों की खिचड़ी इसलिए पक रही है क्योंकि सतगुरू का अभाव है।

10. पउड़ी (मीमांसा)

फिरि जैमनि रिखु बोलिआ जुजर वेदि मथि कथा सुणावै।
करमा उते निबड़ै देही मधि करे सो पावै।
थापसि करम संसार विचि करम वास करि आवै जावै।
सहसा मनहु न चुकई करमा अंदरि भरमि भुलावै।

भरमि वरतणि जगति की इको माइआ ब्रहम कहावै।
जुजर वेद को मथनि करि तत ब्रहम विचि भरमि मिलावै।
करम दिड़ाइ जगति विचि करमि बंधि करि आवै जावै।
सतिगुर बिना न सहसा जावै।

अर्थ – फिर दूसरा जैमिनी ऋषि मीमांसा शास्त्र की रचना करके उसमें यजुर्वेद की सारभूत बात को बतलाता है। उन्होंने कर्म सिद्धान्त के दर्शन को प्रस्तुत करते हुए कहा कि शरीर के द्वारा जो भी कर्म किए जाएँगे उनका फल तो भोगना ही पड़ेगा। उन्होंने कहा कि वासनाओं का बँधा हुआ व्यक्ति इस संसार से आता व जाता रहता है। इस प्रकार संसार को कर्मों के भ्रम के अन्दर भुला दिया। उन्होंने कहा कि माया तथा ब्रह्म एक ही हैं दो नहीं। यजुर्वेद का सूक्ष्म विश्लेषण करके धर्म-कर्म का उपदेश जगत को दिया कि कर्मों के बन्धन में बंधा हुआ ही यह जीव संसार में आता व जाता है, लेकिन इस बात की शंका सतगुरू के बिना दूर न हो सकी।

पउड़ी 11 (वेदान्त)

सिआम वेद कउ सोधि करि मथि वेदाँतु बिआसि सुणाइआ।
कथनी बदनी बाहरा आपे अपणा ब्रहमु जणाइआ।
नदरी किसै न लिआवई हउमै अंदरि भरमि भुलाइआ।
आपु पुजाइ जगति विचि भाउ भगति दा मरमु न पाइआ।
त्रिपति न आवी वेदि मथि अगनी अंदरि तपति तपाइआ।
माइआ डंड न उतरै जमडंडे बहु दुखि रुआइआ।
नारदि मुनि उपदेसिआ मथि भागवत गुनि गीत कराइआ।
बिनु सरनी नहि कोइ तराइआ।

सामवेद को पढ़कर वेदान्त (वेद का सार) निकाला और फिर उसका मन्थन करके ब्यास जी ने सुनाया कि कथनी तथा बदनी से आत्मा बाहर है और अपने आप को ही ब्रह्म बतला दिया। वह नजर तो किसी के आता ही नहीं है। हउमै के भ्रम के अन्दर उसने सारे जगत को भुला दिया। वे स्वयं की ही जगत में पूजा करवाने लग पड़े। ब्यास जी को भी सारा वेदाध्ययन कर करके भी शान्ति न आ पाई और वह भ्रम की आग में तपने लगा। माया का दण्ड उसके सिर से उतरा नहीं और यमों के बाह्य दण्ड के दुख के कारण उसने अपना दुख नारद मुनि के पास जाकर रोया। नारद मुनि ने उपदेश किया और भागवत सम्बन्धी हरियश करवाया कि गुरू की शरण के बिना कोई भी पार नहीं हो पाता है।

भावार्थ – व्यास जी ने भले ही अट्ठारह पुराणों तथा सारे वेदों का अध्ययन खूब किया लेकिन उनके मन को भी शान्ति न आ पाई। नारद मुनि ने उसका बुरा हाल देखकर उसे चतुरश्लोकी भागवत प्रदान की और कहा कि भक्ति भाव से इसका गुणानुवाद करो। जब उसने ऐसा किया तब कहीं जाकर उसका मनोरथ सिद्ध हो पाया।

भाई साहिब जी ने यह वेदान्त मत के बारे में प्रचलित निश्चय का वर्णन किया है। वे अपना विचार यह देते हैं कि वाहिगुरू की शरण में पड़े बिना आज तक किसी का उद्धार नहीं हो सका है।

12. पउड़ी (सांख)

दुआपरि जुग बीतत भए कलजुगि के सिरि छत्र फिराई।
वेद अथरबणि थापिआ उतरि मुखि गुरमुखि गुन गाई।
कपल रिखीसुरि साँख मथि अथरबनि वेद की रिचा सुणाई।
गिआन महा रस पीअकै सिमरे नित अनित निआई।

गिआन बिना नहि पाईऐ जे कोई कोटि जतन करि राई।
गिआन मते सुखु उपजै जनम मरन का भरमु चुकाई।
गुरमुखि गिआनी सहजि समाई॥

द्वापर युग बीत गया और अब कल्युग के सिर पर छत्र टिक गया है, भावार्थ कल्युग का समय आ गया है। अब अथर्ववेद का समय आ गया, फलस्वरूप लोग उत्तर दिशा की तरफ मुँह करके भजन करने लग पड़े। अब कपिल ऋषि ने अथर्ववेद की गहन विचार करने के बाद सांख शास्त्र की रचना की तथा बतलाया कि ज्ञान रूपी महा अमृत रस का पान करे तथा नित्त व अनित्त का निर्णय करे भावार्थ सत्य व झूठ का निर्णय करे तब कहीं मुक्ति प्राप्त हो सकती है। यानि कि उन्होंने यह कहा कि ज्ञान के बिना मुक्ति का मिल पाना नामुमकिन है। जो जीव कर्मयोग करेगा वह असत्य होगा और वह राई जितना भी टिक नहीं सकेगा। केवल ज्ञान प्राप्त करके ही सुख उत्पन्न होगा और आवागमन का भ्रम मिट सकेगा। गुरू द्वारा ही ज्ञान सहज पद या निजस्वरूप अथवा आत्म स्वरूप में लीन होगा।

भावार्थ - भाई साहिब जी ने सांख शास्त्र के बारे में अन्य मतों की राय बतलाई है अर्थात जिस भाव में सांख मत वालों का कोई फिरका यह मानकर बैठा हुआ है कि केवल सत्य और असत्य का निर्णय ही करना चाहिए और योग की कोई भी जरूरत नहीं है (सांख शास्त्र कर्ता पुरुष को नहीं मानता है) उसका हाल ब्यान करके अपना विचार यह प्रस्तुत किया है कि सहज पद में पहुँचना ठीक कार्य है और इसके लिए गुरू ही परम सहायक है। सहज पद में आत्मा, अकाल पुरुष से जाकर मिल जाती है।

13. पउड़ी (विशेषक)

बेद अथरबन मथन करि गुरमुखि बासेखक गुन गावै।
जेहा बीजै सो लुणै समे बिनाँ फलु हथि न आवै।
हुकमै अंदरि सभु को मंनै हुकमु सो सहिज समावै।
आपो कछू न होवई बुरा भला नहि मंनि वसावै।
जैसा करि तैसा लहै रिखि कनादिक भाखि सुणावै।
सतिजुगि का अनिआइ सुणि इक फेड़े सभु जगत मरावै।
त्रेते नगरी पीड़ीऐ, दुआपरि वंसु कुवंस कुहावै।
कलिजुग जो फेड़े सो पावै।

अथर्ववेद की विचार करके कणाद आचार्य विशेषक नामक शास्त्र का गुणगान किया है और बतलाया है कि कोई व्यक्ति जैसा बोएगा उसी के अनुरूप काटेगा और समय से पहले कुछ फल प्राप्त नहीं हो सकेगा। हुकमाधीन सारी सृष्टि है जो भी हुक्म का पालन करेगा वह सहज पद में लीन हो जाएगा। अपने वश में तो कुछ भी नहीं है, इसलिए बुरा व भला कुछ भी अपने मन में धारण मत ककरो। भावार्थ यह मत कहो कि मैं करता हूँ क्योंकि सब कुछ तो समय ही करवाता है, कणाद ऋषि ने लोगों को यह सुनाया कि कोई जैसा भी कार्य करेगा उसे उसी के अनुरूप फल मिलेगा। सत्युग के अन्धे कानूनों को बात सुनो कि यदि कोई एक व्यक्ति कुकर्म करता था तो उसका फल सारे देश को ही भुगतना पड़ता था, त्रेता युग में उसका फल उस नगर को भोगना पड़ता था, द्वापर युग में यह फल उस कुकर्मी के सारे वंश को भुगतना पड़ता था, जबकि कल्युग का विधान ऐसा है कि जो भी बुरा कर्म करेगा तो उसका फल उसी को भोगना पड़ेगा।

भावार्थ - इसमें विशेषक मत का वर्णन किया गया है कि इसमें कर्मों के सिद्धान्त की बात है। पिछले युगों में लोग यह मानते थे कि उनमें यदि कोई एक व्यक्ति कुकर्म करता था तो उसका फल बहुत सारे लोगों को भोगना पड़ता था लेकिन कणाद ऋषि ने यह बात कही कि जो करेगा वही उसका फल पाएगा। भाई साहिब जी कणाद ऋषि के इस ख्याल को न्याय संगत देख कर इसे पसन्द व इसकी प्रशंसा करते हैं कि जो करेगा वह भरेगा। लेकिन यहाँ पर यह बता देना भी तर्कसंगत होगा कि भाई साहिब जी कणाद ऋषि के पूरे के पूरे सिद्धान्त के साथ सहमत नहीं हो रहे हैं।

भाई नन्द लाल जी
गजलें

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मार्च, पृष्ठ - 52)

ह्यदा हजार सिजदा ब-सूइ तू मीकुनंद
हरदम तवाफि काअबा कूइ तू मीकुनंद।

लोग अट्ठारह हजार सिजदे तुम्हारी तरफ करते हैं, प्रत्येक समय वह तुम्हारी गली के काबे की परिक्रमा करते हैं।

हर जा कि बिनिगरेद जमालि तू बिनिगरंद
साहिब दिलाँ नजाराइ रुइ तू मी कुनंद।

जहाँ पर भी वे देखते हैं तुम्हारा ही जमाल देखते हैं। दिलों के महिराम तुम्हारे मुख का दीदार करते हैं।

जाँ रा निसारि कामति राअनात करदा-अंद
दिल-होइ मुरदा जिंदा जि रुइ तू मी कुनंद।

उन्होंने अपनी जान तुम्हारे सुन्दर कद पर से वार दी है। वे मुर्दा दिलों को तुम्हारी सुगन्ध के साथ जीवित करते हैं।

आईनाइ खुदाए-नुमा हसत रुइ तू
दीदारि ह्क जि-आईनाइ रुइ तू मी कुनंद।

तुम्हारा मुख परमात्मा का दर्शन करवाने वाला शीशा है। इसलिए हम परमात्मा का दीदार तुम्हारे मुख रूपी शीशे के माध्यम से करते हैं -

तीरा-दिलाँ कि चशम नदारंद मुतलिक अंद
खुरशीद रा मुकाबलि रुइ तू मी कुनंद।

काले दिलों वाले, जिनकी आँखें नहीं हैं, इस बात के लिए आजाद हैं कि वे सूर्य को तुम्हारे मुख के सामने लाकर खड़ा कर देते हैं।

मसतानि शौक गुलगला दारंद दर जहाँ
सद जाँ फिदाइ यूक सरि मूइ तू मी कुनंद।

तुम्हारे शौक में मस्त आशिक सारे संसार को शोरगुल के साथ भर देते हैं। वे सैंकड़ों जानों को तुम्हारे एक बाल के ऊपर से कुर्बान कर देते हैं।

दर परदाइ जमालि तू रौशन शवद जहाँ
दर हर तरफ कि जिकरि जि रुए तू मी कुनंद।

तुम्हारे प्रेम के मतवाले गोया की भांति सदैव अपनी आवाज को तुम्हारी खुशबू के साथ सुरीली बना लेते हैं।

(23)

अै गरदशि चशमि तू कि अ्याम न दारद
खरशीदि फलक पेशि रुखत नाम नदारद।

ऐ कि तुम्हारी आँखों की गरदिश तो दिनों में भी नहीं, आसमान का सूर्य तुम्हारे मुख के सौन्दर्य के सामने कुछ भी अर्थ नहीं रखता है।

स्यादि कजा अज पए दिल बुरदनि आशिक
चूं चलकाइ जुलफि तू दिगर दाम नदारद।

मौत का देवता आशिक के दिल को पकड़ने के लिए तुम्हारे जुल्फ के फन्दे जैसा अन्य कोई जाल नहीं रखता है।

ईं उमरि गिराँ मायादि गनीमत शुमर आखिर
मा सुबह न दीदेम कि उ शाम न-दारद।

इस बेशकीमती आयु को आखिर गनीमत ही समझो क्योंकि हमने कोई भी ऐसी सवेर नहीं देखी है जिसकी शाम न हुई हो।

ता चंद दिलासा कुनम ईं खातिरि खुद रा
बे-दीदनि रुइ तू दिल आराम न दारद।

मैं कब तक अपने दिल को दिलासा दूँ क्योंकि तुम्हारा मुख देखे बिना तो मेरे दिल को चैन ही नहीं आता है।

ईं चशमि गौहर-बार कि दरिआ शुदा गोआ,
बे-रुइ दिलारामि तू आराम न-दारद।

इस मोतियों की वर्षा करने वाली आँख को, ऐ गोया,

जो कि समुद्र बन गई है, दिल को आराम पहुँचाने वाले तुम्हारे मुख के बिना आराम नहीं आता है।

24.

ता लालि जाँ फजाइ तू गोया नमी शवद।
दरमानि दरदि मासत कि पैदा नमी शवद।

जब तक तुम्हारे जान को बढ़ाने वाले लाल होंठ बोलते नहीं हैं, हमारे दर्दों की दवा भी पैदा नहीं होती है।

लबि तिशना रा बा-आबि लबत हसत आरजू
तसकीनि मा जि खिजरो मसीहा नमी शवद।

प्यासे होठों को तुम्हारे हाढों के अमृत की लालसा है हमारी तसल्ली तो मसीहा से भी नहीं हो सकती है।

दारेम दरदि दिल की मर उ रा इलाज नीसत
ता जाँ नमी दिहेम मदावा नमी शवद।

हमें इस प्रकार का दिल का दर्द लगा हुआ है कि जिसका कोई उपचार नहीं है, जब तक हम जान नहीं दे देते हैं, तब तक आराम नहीं हो सकता है।

गुफतम कि जाँ-दिहेम इवजि गक निगाहि तू
गुफता मिआनि मा ओ तू सौदा नमी शवद।

मैंने कहा कि तुम्हारी एक निगाह के बदले हम अपनी जान हाजिर करते हैं, उसने कहा कि हमारे और तुम्हारे बीच सौदा नहीं हो सकता है।

अंदर हवाइ जुलफि गिराहगीर महिवशाँ
मन मी-रवम गिरह जि दिलम वा नमी शवद।

चाँद जैसे सुन्दरों की, जुल्फों की लालसा में गाँठें लगी हुई हैं। मैं जाता तो हूँ लेकिन मेरे दिल की गाँठ तुम्हारे बिना खुलती नहीं है।

बा साहिलि मुराद कुजा आशना शवेम
ता चशमि मा ब-यादि तू दरिआ नमी शवद।

जब तक हमारी आँख तुम्हारी याद में सागर नहीं बन जाती है, हम मुराद की कंघी से वाकिफ नहीं हो सकते हैं।

गोया दर इंतजारि तू चशमम सफेद शुद
मन चूं कुनम कि बे तू दिलासा नमी शवद।

तुम्हारे इन्तजार में मेरी आँखें भी अन्धी हो गई हैं क्योंकि तुम्हारे बिना मुझे सांत्वना मिल ही नहीं सकती है।

(25)

चूं माहि दो हफता रु नमाई, चि शवद
इमशब महि मन अगर बिआई चि शवद।

यदि तुम चौदहवीं का चाँद मुखड़ा दिखला दो तो क्या हर्ज है? यदि मेरे चन्दा! आज रात को तुम मुख दिखला दो तो भला क्या हर्ज है?

ईं जुमलाइ जहाँ असीरि जुलफत गशता
यक लहिजा अगर गिरहा कुशाई चि शवद।

ये सारा जहाँ तुम्हारी जुल्फ का कैदी है यदि एक क्षण के लिए तुम इसकी गाँठ खोल दो तो भला क्या हर्ज है?

आलम हमा गशता असत बे तू तारीक
खुरशीद सिफत अगर बर आई चि शवद।

सारी दुनिया तुम्हारे बिना अन्धकारयुक्त हो गई है, यदि तुम सूर्य की भांति निकल आओ तो क्या हर्ज है?

यक लहिजा बिआ वा दर दो चशमम बि-नशीं
दर दीदा निशसता दिलरुबाए चि शवद।

एक क्षण के लिए आओ और मेरी दोनों आँखों के बीच आकर बैठ जाओ। हे दिल ले जाने वाले! यदि तुम आँखों में बैठ जाओ तो क्या हर्ज है?

ईं हिंदूइ जलत कि बर-रुअत शैदा असत
बि-फरोशी अगर ब नकदि खुदाई चि शवद।

इस तुम्हारे काले तिल को, जो कि तुम्हारे मुख का दीवाना है, यदि तुम कुल खुदाई के बदले में बेच दो तो क्या हर्ज है?

दर दीदा तूई व मन बहरि कू जोया
अज परदाइ गैब रु-नमाई चि शवद।

तुम तो मेरी आँखों के अन्दर ही निवास कर रहे हो। तो फिर मैं किसे ढूंढ रहा हूँ? अदृश्य के पर्दे में से यदि अपने मुख को दिखला दो, तो फिर क्या हर्ज है?

गोयासत बहर तरफ सुरागत जोया
गर गुम-शुदारा रहिनमाई चि शवद।

गोया हर तरफ तुम्हारी ही तलाश कर रहा है यदि भूले हुए को रास्ता दिखला दो तो क्या हर्ज है?

'चलता'

गुरु नानक आगमन

(श्री गुरु नानक चमत्कार)

पद्म भूषण डा. भाई वीर सिंह जी

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 54)

गुरू जी बोले, सालसराए! तुम्हारे नौकर को तो वह दृष्टि प्राप्त हो गई है जिसके द्वारा उसे तो परमात्मा कण-कण में दिखाई देने लग पड़ा है।

यह सुनकर जौहरी ने अपने नौकर की तरफ देखा और वह उसके चरणों पर ढह पड़ा। गुरू जी उसकी इस विनम्रता व द्रवणता को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हो गए और आपने अपने सिर पर जो डेढ़ गज का साफा बाँधा हुआ था, उसे उतार कर सालसराए के सिर पर बाँध दिया तथा उसके ऊपर करुणा दृष्टि डाल कर, उसकी दृष्टि को भी ऊँचा कर दिया। वह कपड़ा -

सालस बाँधयो सीस पर शीघर खुले कपाट। गिआननंद पूरन भयो ठटयो और ही ठाट। भा निहाल ततकाल श्री गुर नानक मइआ ते। उमगयो प्रेम बिसाल उसतति उचरतिशबदकर। (गु: नानक प्रकाश)

इस प्रकार से वे दोनों निहाल हो गए। उस समय गुरू जी ने उच्चारण किया कि ऐ प्रेमीजनो! जिस प्रकार से जौहरी, रागी व कवि की दृष्टि ऊंची होती है लेकिन फिर भी बहुत थोड़ी सी ही ऊँची है जबकि एक और दृष्टि है जो कि समस्त दृष्टियों से ऊंची दृष्टि है तथा यह दृष्टि तुम्हें अब प्राप्त हुई है। यह पूर्ण अनुभव की स्थिति है जिसमें दृष्टिमान संसार से ध्यान हटकर विसमाद में पहुँच जाता है। इसमें निजत्व आत्म स्वरूप में लीन हो जाता है और वह फिर परमात्मा में ही जागृत होता है। अनन्त की झलक इसमें दिखाई पड़ती है, इसमें फिर कोई भी सीमा नहीं रह जाती है। यह झलक मन के ऊपर एक प्रभाव छोड़ जाती है, जिसके कारण से चलते-फिरते, सोते-जागते वाहिगुरू, करतार व निरंकार का जलवा आत्म-साक्षात्कार करवाता ही रहता है। फिर यह जीव दृष्टिमान को देखकर भूलता नहीं है, बल्कि इस दृष्टिमान को देखकर इसे वह कुछ-कुछ पोशाक की भांति दिखाई पड़ता है और उस पोशाक के अन्दर से इसे वह करतार दिखाई पड़ता है। 'इहु जग सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु' तथा देखने वाला उसके अन्दर निवास कर रहे प्यारे से बलिहार जाता है।

'वलिहारी कुदरति वसिआ तेरा अंतु न जाई लिखिआ।'

सूचना - इस प्रकार से ध्यान मग्न व पूर्ण रस को प्राप्त होकर सालसराए व अधरका विदा हुए। सतगुरू जी कई महीने वहाँ पर रहे। यहाँ पर गंगा के पार पटने से तीन मील की दूरी पर एक टिकाना है जहाँ पर कि कार्तिक की पूर्णमाशी को हरिहर क्षेत्र का मेला लगा करता था। इसी मेले के लिए गुरू जी यहाँ पर ठहरे हुए थे ताकि आए हुए यात्रियों के अज्ञान, भ्रम व अन्धकार को दूर किया जा सके। अतः आपके चहुँओर रोज भीड़ लगी रहती थी। ईश्वरीय कीर्तन का उपदेश होता था, फलस्वरूप आत्मिक तौर पर मर चुके लोगों को जीवन प्राप्त होने लगा। इस प्रकार से पटने शहर में सिक्खी का खूब प्रचार हुआ और सत्संग के दिव्य रस का अमृत प्रवाह चलने लग पड़ा।

यही कार्तिक की पूर्णमाशी, अब गुरू जी के अवतार का दिन प्रसिद्ध है। इसी दिन गुरू जी ने पटने की संगत को निहाल किया था। गुरू जी वहाँ पर चार माह तक ठहरे रहे और जब आप वहाँ से चलने लगे तो संगत ने किसी आगू के लिए विनय की। उस समय गुरू जी ने अधरके की तरफ इशारा किया और वचन किया कि संगत की अगुवाई व सेवा सालसराए करेगा और उसके बाद अधरका करेगा।

इसी सालस की संतान में से फतहचन्द मैणी दसवें पातशाह जी का प्यारा हुआ है तथा उसकी यादगार का टिकाना अब तक मौजूद है तथा श्रोतों के अनुसार अधरके की सन्तान में से मसन्द दसवें पातशाह जी की सेवा करते रहे हैं और वर्तमान समय में भी उनकी सन्तान 'हरिमन्दिर साहिब' पटना की सेवा में है। सालसराए, प्रेमीपुरुष व भजन-बन्दगी वाला पुरुष हुआ है और वह कविता की भी रचना खूब किया करता था। उसके कई शबद महला १ के अन्तर्गत जनम साखियों में दिए गए हैं। उसकी अपनी छाप वाला एक शबद मिला है -

बिलावल सालसराइ जी की -

***सतिगुर दाता नाम का दीने खोल कपाट॥
एक जो वणजा वणजिआ बहुर न आवै घाट॥***

सतिगुर नानक पूरा॥ बचन का सूरा॥1॥रहाउ॥अगम निगम दिखलावता खोले नेत्र कपाट आनंद॥ जग वणजारा सगल है साह एक भगवंत॥ वणज हमारा सतिगुर पूंजी हमरी नाम॥ आठ पहिर धुनि लग रहे यही हमारे काम॥ सालस बिनवै बेनती सुण लै तूं करतार॥ काचे रंग उतारके साचे रंग अपार॥

22. गया

सालसराय तथा अधरक्के का उद्धार करने के बाद श्री सतगुरू जी अन्य जगहों पर स्वाति नक्षत्र की बूँदों की वर्षा करने के लिए वहाँ से प्रस्थान कर गए। आप जी परोपकारी बादलों की भांति आगे के लिए चल पड़े और पहुँच गए - राजगिरि। यहाँ पर एक मेला चल रहा था। मेले के अन्दर कई नास्तिक लोगों को आस्तिक बनाने के बाद आप गया पहुँच गए। आप जी के सुन्दर आभायुक्त व नूरानी चेहरे को देखकर वहाँ पर पण्डित भी आ गए तथा कहने लगे, आओ! पिण्ड भरवा लो तथा अपने पितरों का कल्याण करवा लो। उस समय बाबा जी ने कहा, पण्डित जी! हमने तो अपने पितरों का, अपने सत्संगियों का तथा अपना भी, दीवा व क्रिया-कर्म पहले ही करवा लिया है और क्रिया-कर्म भी ऐसा करवाया है कि अज्ञानता का सारा अन्धकार मिट गया है तथा वे सद्गति को प्राप्त हो चुके हैं। स्वर्ग तथा नर्क जो है यह सब अज्ञानता के कारण ही है, इसलिए जिन्होंने नाम रूपी दीपक को जगा लिया है, उनका उद्धार हो गया है। इस सम्बन्ध में श्री बाबा जी ने 'आसा राग' में एक शबद का उच्चारण किया है -

आसा महला १

दीवा मेरा एकु नामु दुखु विचि पाइआ तेलु ॥ उनि चानणि ओहु सोखिआ चूका जम सिउ मेलु ॥ 1 ॥ लोका मत को फकड़ि पाइ ॥ लख मड़िआ करि इकठे एक रती ले भाहि ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ पिंडु पतलि मेरी केसउ किरिआ सचु नामु करतारु ॥ ऐथै ओथै आगै पाछै एहु मेरा आधारु ॥ 2 ॥ गंग बनारसि सिफति तुमारी नावै आतम राउ ॥ सचा नावणु ताँ थीऐ जाँ अहिनिसि लागै भाउ ॥ 3 ॥ इक लोकी होरु छमिछरी ब्राहमणु वटि पिंडु खाइ ॥ नानक पिंडु बखसीस का कबहूं निखूटसि नाहि ॥ अंग - 358

मेरा दीपक एक परमात्मा का नाम सिमरन करना है, उसके अन्दर 'दुख' का हमने तेल डाला हुआ है। जब दीपक जलता है, तो वह मुझे वाहिगुरू जी के मिलाप के मार्ग को रौशन भरपूर करता जाता है और साथ ही दूसरी तरफ जैसे-जैसे दीपक के जलने से उसमें भरा हुआ तेल घटता जाता है, उसी क्रम में मेरे दुख भी घटते जाते हैं। यदि कोई यह शंका करे कि दुख तो हमारे कर्मों के फल हैं और उन्हें तो भोगना ही पड़ता है तो गुरू जी कथन करते हैं कि ऐ प्रेमीजनो! इस व्यर्थ के ख्याल में मत पड़ना कि कर्मों का नाश नहीं हो सकता है, जिस प्रकार से सैंकड़ों मन लकड़ी में यदि एक रत्ती भर आग रख दी जाए तो वह सारी जल कर राख बन जाती है, उसी प्रकार से यदि कर्मों रूपी लकड़ी के ढेर में नाम रूपी चिंगारी को रख दिया जाए तो वह सारे कर्मों को जलाकर राख कर देती है। मेरा पिण्ड तथा पत्तल मेरा वाहिगुरू है तथा मेरा क्रिया-कर्म परमात्मा का सच्चा नाम है। लोक-परलोक में तथा आगे-पीछे मेरा आधार यही है। हे वाहिगुरू जी! तुम्हारा यशगान करना ही, मेरा गंगा व काशी का तीर्थ है और इसी में मेरी आत्मा स्नान करती है। हाँ, हमेशा के लिए स्नान तभी हो पाता है जबकि दिन-रात परमात्मा के साथ प्रीति पड़ जाए। ब्राह्मण जो पिण्ड भरवाते हैं, वह पितरों को देवताओं के साथ मिलाने के लिए भरवाते हैं लेकिन हमें तो वाहिगुरू जी की कृपा का पिण्ड प्राप्त है जो कि कभी भी समाप्त ही नहीं होता है, भावार्थ वह हमें हमेशा आनन्द के साथ मिलाकर ही रखता है। यह दलीलपूर्ण विचार सुनकर पण्डित लोग गुरू जी की शरण पड़ गए।

23. बुद्ध गया - देवगिरि

गया के पण्डितों को कल्याण का असली मार्ग बतलाने के बाद सतगुरू जी वहाँ से प्रस्थान कर गए। श्री गुरू जी ने जो सुन्दर विचार देकर उन पण्डितों को ज्ञान चक्षु प्रदान किए वह सारी विचार उपर्युक्त शब्द में निहित है, जिन्हें पढ़कर आज तक अनेकों जीवों ने सुख प्राप्त किया है।

गया से प्रस्थान करने के बाद आप बुद्ध गया पहुँच गए। यहाँ पर आकर आपने बाहर की तरफ ही अपना डेरा लगा लिया। इस दौरान मरदाना कीर्तन करता और आप निजानन्द में लीन हो जाते। इस कीर्तन ने बुद्ध गया के महन्त को अपनी तरफ खींचा। उसका नाम 'देवगिरि' लिखा है। वह व्यक्ति वैसे तो बौद्ध मन्दिर का महन्त था लेकिन वैसे करीब-करीब सन्यासी ही था। हिन्दुओं ने जब बौद्ध धर्म की हिन्दोस्तान में से समाप्ति कर दी तो उन्होंने यह बौद्ध स्थान भी अपने अधिकार में ले लिया था। यह महन्त देवगिरि बहुत सारे अपने छोटे मन्दिरों के महन्तों का बड़ा महन्त था और बहुत सम्मानीय पुरुष था। इसके साथ ही वह सत्य का खोजी और विद्वान पुरुष भी था। विद्या ने इसके मन को जिज्ञसावान तो बना दिया था और वह वैराग्यवान भी था लेकिन वह 'राग' को वैराग्य में बदलता-बदलता इस प्रकार का हो गया था कि जैसे वृक्ष की शाखा पक्की होती-होती सूख जाए और इस स्थिति में उसकी लचक पूर्णतः समाप्त हो जाए। उसकी यह लचक इसलिए समाप्त हो जाती है क्योंकि उसमें जीवन का कण पूर्णतः समाप्त हो चुका होता है। दूसरी तरफ जीवित टहनी या शाखा में पक्कापन और लचकीलापन दोनों ही होता

है। जीवन-मरण की इस प्रकार की बातचीत जब श्री गुरू नानक देव जी ने समझाई तो उसकी समझ में जीवन की रौ दोबारा रुमकने लग पड़ी। सतगुरू जी ने उसे समझाया कि राग या प्यार वह बुरा है जो कि बुरे कर्मों के प्रति हो, नाशवान पदार्थों के प्रति हो, लेकिन अविनाशी तथा प्रिय स्वरूप वाले के प्रति राग (प्रेम) बुरा नहीं क्योंकि उसके साथ प्रेम करने से पवित्र हुआ जाता है। उसका राग या प्रेम दुखदाई नहीं क्योंकि वह सदा स्थिर है और उसका कभी भी नाश नहीं होता है। यही कारण है कि उसके साथ किए गए प्रेम का अन्त, दुख नहीं हो सकता है। फिर वह आनन्द स्वरूप है और उसका प्रेम, सुख तथा आनन्द प्रदान करने वाला है। फिर जिस वैराग्य को धारण करने के लिए हमने अपने मन को दबाना है, इन्द्रियों को मारना है तथा संसार और इसकी रचना को बुरा समझना है, वह वैराग्य, अविनाशी के साथ प्रेम करके सहज स्वभाव ही प्राप्त हो जाता है तथा उसका असर इन्सान की शक्तियों को मारने वाला नहीं पड़ता। इन्सान केवल बुद्धि नहीं है बल्कि इसके निजत्व में प्रेम भी है। जैसे कि तुमने वैराग्य को धारण किया है अर्थात मन को मार दिया है, अब किसी भी तरफ का प्रेम तुम्हारे पक चुके मन या बुद्धि को निवा नहीं सकता है क्योंकि वह सूखी टहनी की भांति पक्का हो गया है। इसके द्वारा कारज की सिद्धि नहीं हुई है अर्थात मन में लचकदार तथा जीवित निर्लिप्तता नहीं है लेकिन निर्जीव उदासी की अकड़ अवश्य है।

देवगिरि के लिए यह एक नया सबक था। वह सारे आन्तरिक भावों को मारकर ज्ञानवान होने को सन्यास तथा सारी इन्द्रियों व मन आदि को मारकर, एकाग्र हो जाने को 'योग' कहता था। उसने गुरू जी को पूछा कि क्या फिर इन्द्रिय दमन नहीं करना है? मन को मारना नहीं है? सतगुरू जी ने समझाया कि प्रेमीपुरुष! इन्द्रियों को विकारों से रोकना है और मन को निम्न कोटि के खयालों में जाने नहीं देना है। अवगुणों को त्याग कर शुभ गुणों को धारण करना है लेकिन एक पति परमेश्वर का मन में ध्यान करके उसके साथ प्रेम करना है। मुख्य प्रयोजन तो बुद्धि को निर्मल करने का है। बुद्धि की निर्मलता के लिए ही वैराग्य और विवेक का प्रयोग करना है। मन के ऊपर इस निर्मल बुद्धि का चिराग रौशन करके इसके कुण्डे के नीचे मन को चलाना है। ऐसे प्रबुद्ध मन के नियन्त्रण में इन्द्रियों को चलाना है, इसके साथ ही हमारे अन्दर यानि कि हमारी आत्मा में जो प्रिय स्वरूपता का अंश है, प्रेम है उसका भी प्रयोग करना है, उसे मारना नहीं है। इसके साथ ही मन के रुख को ऊपर की तरफ लगे रहने वाला बनाना है और बुद्धि का आलम्ब ढूंढ़ कर उसे पकड़ना है। बुद्धि ने जब निश्चय कर लिया कि जगत का मूल मालिक व पालक एक अकाल पुरुष है तो अब उसका आलम्ब यह 'ऐकंकार' है अर्थात अकालपुरुष है। जब मन व बुद्धि वाहिगुरू के साथ प्रेम स्थापित करके अर्थात उसे अपना आलम्ब बनाकर उसके साथ निरन्तर प्रेम स्थापित कर लेंगे तो फिर उनके अन्दर वाहिगुरू और वाहिगुरू में वे बस जाएंगे। फिर हमारा निजत्व जीवित निजत्व होगा और वह जीवन मुक्ति के सुख प्राप्त करेगा। इस प्रकार से सारा निजत्व, अपने सारे जोर के साथ जब हमेशा लगा रहेगा तो 'एक' में समाया हुआ सफल तथा सुरजीत ज्ञान वाला रहेगा। यह निजत्व शुद्ध आत्मा है और यह कार्य पूर्णता को तभी प्राप्त होता है जबकि गुरू-शब्द की कमाई की जाए। यह सब कुछ सहजता के साथ ही प्राप्त किया जाता है। शनैः शनैः हठ, मन तथा आत्म समर्पण के सारे के सारे कार्य करने हैं, लेकिन अपने अन्दर उस साईं का सहारा लेकर और उसके सिमरन के सहारे। जब अन्दर ठण्ड आ जाएगी तो सहजता आ जाएगी तथा सहज अन्दर टिक जाएगा। यह कहकर श्री गुरू बाबा जी के नेत्र बन्द हो गए और आपके जुड़ते जा रहे नेत्रों के साथ 'हरणी होवा' पद निकला मरदाना जी ने रमज समझ ली तथा गउड़ी वैरागण के वैराग्यमयी व रसयुक्त संगीत में रवाब की मधुर सुरों के साथ इस प्रकार से गाना शुरू कर दिया -

गउड़ी बैरागणि महला 1 ॥ हरणी होवा बनि बसा कंद मूल चुणि खाउ ॥ गुर परसादी मेरा सहु मिलै वारि वारि हउ जाउ जीउ ॥ 1 ॥ मै बनजारनि राम की ॥ तेरा नामु वखरु वापारु जी ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ कोकिल होवा अंबि बसा सहजि सबद बीचारु ॥ सहजि सुभाइ मेरा सहु मिलै दरसनि रुपि अपारु ॥ 2 ॥ मछुली होवा जलि बसा जीअ जंत सभि सारि ॥ उरवारि पारि मेरा सहु वसै हउ मिलउगी बाह पसारि ॥3॥ नागनि होवा धर वसा सबदु वसै भउ जाइ ॥ नानक सदा सोहागणी जिन जोती जोति समाइ ॥4॥2॥19॥

अंग - 157

अब देव गिरि को समझ आ गई तथा उसकी वृत्ति में वाहिगुरू के नाम का निवास हो गया एवं आठो पहर एक ही लिव का रौ चल पड़ा। पहले तो वह अपने ख्याल में ज्ञानवान था लेकिन ज्ञानवान होकर भी वह ख्यालों में खोया रहता था कथा-वार्ता, चर्चा-विचार संध्या आदि के समय ब्रह्म के संकल्प मात्र निकलते थे लेकिन अब परमात्मा का अस्तित्व व एक रसयुक्त याद निरन्तर रौ बनकर अन्दर बस गई। मन, जो कि ख्यालों में बिखरा रहता था, वह 'एक' का ध्यान करके बलयुक्त व सुख में आ गया।

देवगिरि ने बहुत दिनों तक सतगुरू जी को प्रेम सहित अपने पास रखा, उनके देव-प्रभाव का उनके ईश्वरीय ज्ञान का, उनके परमात्म प्रेम के रस को पिया व जिया तथा 'कीरतन निरमोलक हीरा' सुन-सुन कर अपने आप के मूल्य में बृद्धि की।

श्री गुरू नानक देव जी के 2019 में 550 वर्षीय मनाए जा रहे प्रकाश पर्व को समर्पित गुरू नानक वाणी पर आधारित श्रृंखलाबद्ध लेख
श्री गुरू नानक देव जी की प्रमुख रचना 'आसा दी वार' में 'मानव संकट की चेतना'

डा. जगजीत सिंह

सुच्चता, जूठ व तीर्थ स्नान

ब्राह्मण लोग जाति की उच्चता व शुद्धता, बाहरी स्नानों की शुद्धता, पानी के चुल्लुओं के माध्यम से शुद्धता तथा तीर्थ स्नानों के माध्यम से प्राप्त की गई शारीरिक शुद्धता को ही महानता देते थे। दूसरी तरफ गुरू जी ने इस प्रकार की शुद्धता को पाखण्ड कहा तथा मन की पवित्रता को असली शुद्धता कहा। यदि मन मैला है तो सब कुछ मैला ही है क्योंकि शरीर को शुद्ध करने से मन की मैल दूर नहीं हो सकती है, भले ही अड़सठ तीर्थों का स्नान कर लिया जाए-

अंदरहु झूठे पैज बाहरि दुनीआ अंदरि फैलु ॥
अठसठि तीरथ जे नावहि उतरै नाही मैलु ॥
अंग - 473

सूचे एहि न आखीअहि बहनि जि पिंडा धोइ ॥
सूचे सेई नानका जिन मनि वसिआ सोइ ॥
अंग - 472

ब्राह्मण वर्ग की तथाकथित सुच्चता या शुद्धता ने छुआछूत जैसे रोग को जन्म दे दिया फलस्वरूप छुआछूत के कीटाणुओं से सारा भारतीय समाज भ्रष्ट हो गया। घृणा तथा ईर्ष्या ने मानव समाज को दान समाज में बदल दिया। मन की मैल, मन का अहंकार तथा मन के विकार को काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार को दूर नहीं किया जा सकता है। मन की पवित्रता तो 'सत्य' की आराधना से आती है जिसे कि प्रत्येक मनुष्य प्राप्त कर सकता है। बाह्य अस्पर्श्यता तथा बाह्य शुद्धता के पाखण्ड को गुरू ने एक दृष्टांत के माध्यम से स्पष्ट किया है -

पहिला सुचा आपि होइ सुचै बैठा आइ॥ सुचे अगै रखिओनु कोइ न भिटिओ जाइ ॥ सुचा होइ कै जेविआ लगा पड़णि सलोकु ॥ कुहथी जाई सटिआ किसु एहु लगा दोखु ॥ अंनु देवता पाणी देवता बैसंतरु देवता लूणु पंजवा पाइआ घिरतु ॥ ता होआ पाकु पवितु ॥ पापी सिउ तनु गडिआ थुका पईआ तितु ॥ जितु मुखि नामु न उचरहि बिनु नावै रस खाहि ॥ नानक एवै जाणीऐ तितु मुखि थुका पाहि ॥ *अंग - 473*

बाहरी दिखावा तथा पाखण्ड आदि

श्री गुरू नानक देव जी के समय का मनुष्य 'सत्य' के साथ से टूट कर बाहरी दिखावे, रस्मों, वहमों तथा कर्मकाण्डों के जाल में बुरी तरह से फँसा हुआ था और उसी को धर्म समझ बैठा था। इनमें से कुछेक का खण्डन गुरू जी के श्लोकों में से प्रत्यक्ष रूप से परिलक्षित होता है।

(क) जनेऊ - धार्मिक चिन्हों का कर्तव्य तो यह होता है कि चिन्हों को धारण करने वाला, चिन्हों के सहारे अपने चरित्र को ऊँचा करे। जब कोई धार्मिक, चिन्ह मनुष्य के चरित्र में कोई परिवर्तन ही नहीं ला सकता है तो फिर वह केवल फोकट की रस्म मात्र बनकर रह जाता है। इसी प्रकार से उस समय जनेऊ भी एक रस्म मात्र ही बनकर रह गया था। इसके कारण न तो कोई अवगुणों का त्याग करता था और न ही कोई गुणों को धारण ही करता था। नीची जाति वालों को तो वैसे ही जनेऊ धारण करने की मनाही हुआ करती थी। अतः उस समय जनेऊ को धारण करना केवल एक पाखण्ड और हउमै या अहंभाव की रस्म मात्र बनकर रह गया था। मनुष्य का असली जनेऊ तो दया, सन्तोष, सत्य,

ब्रह्मचर्य आदि गुणों को धारण करना है। जो जनेऊ इन गुणों से रहित है, वह तो केवल एक धागा मात्र है, लोगों को ठगने तथा बकरों को काटकर पार्टियाँ करने का, एक पाखण्ड जाल है, जो कि निन्दनीय है -

दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु ॥
एहु जनेउ जीअ का हई त पाडे घतु ॥
... ...
तगु कपाहहु कतीऐ बामृणु वटे आइ ॥
कुहि बकरा रिंनि खाइआ सभु को आखै पाइ ॥
होइ पुराणा सुटीऐ भी फिरि पाईऐ होरु ॥
नानक तगु न तुटई जे तगि होवै जोरु ॥ अंग - 471

इस प्रकार से गुरू जी ने भारतीय समाज के सारे ढाँचे को अपनी रचना का विषय बनाया, हिन्दुओं, मुसलमानों, ब्राह्मणों, काजियों, जालिमों तथा मजलूमों सबको आवश्यकतानुसार प्रताड़ित किया। फोकट कर्म काण्डों, रस्मों, रीतियों, भ्रमों व वहमों में से लोगों को बाहर निकाला, ऊंच-नीच, जाति-पात तथा भेषों के पाखण्डों का खण्डन किया तथा एक परमात्मा के नाम सिमरन में जुड़कर सच्चा व सुच्चा जीवन जीने का मार्ग दर्शाया।

सचु ता परु जाणीऐ जा रिदै सचा होइ॥ कूड़ की मलु उतरै तनु करे हछा धोइ ॥ सचु ता परु जाणीऐ जा सचि धरे पिआरु ॥ नाउ सुणि मनु रहसीऐ ता पाए मोख दुआरु ॥ सचु ता परु जाणीऐ जा जुगति जाणै जीउ ॥ धरति काइआ साध कै विचि देइ करता बीउ ॥ सचु ता परु जाणीऐ जा सिख सची लेइ ॥ दइआ जाणे जीअ की किछु पुंनु दानु करेइ ॥ सचु ताँ परु जाणीऐ जा आतम तीरथि करे निवासु ॥ सतिगुरू नो पुछि कै बहि रहै करे निवासु॥ सचु सभना होइ दारु पाप कढै धोइ ॥ नानकु वखाणै बेनती जिन सचु पलै होइ॥ अंग - 468

दरअस्ल धर्म ने मनुष्य को स्व नियन्त्रण करना सिखाना तथा अनुशासन में रखना होता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, चोरी, यारी, ठगी, झूठ, निन्दा, ईर्ष्या, वैर, विरोध, अहंकार आदि पर नियन्त्रण पाने के लिए धर्म, कुछ बाहरी चिन्हों का सहारा लेता है। जनेऊ भी एक ऐसा ही धार्मिक चिन्ह था लेकिन गुरू जी कहते हैं कि जनेऊ की रस्म अदा करने वाला ब्राह्मण ही संयम रहित होकर चोरियाँ, यारियाँ व ठगी आदि में व्यस्त हो चुका है, इसलिए यह धागा (जनेऊ) पहनने वाले शिष्य से किसी अच्छे अमल की उम्मीद कैसे की जा सकती है?

लख चोरीआ लख जारीआ लख कूड़ीआ लख गालि॥
लख ठगीआ पहिनामीआ राति दिनसु जीअ नालि ॥
अंग - 471

तगु न इंद्री तगु न नारी ॥
भलके थुक पवै नित दाड़ी ॥
तगु न पैरी तगु न हथी ॥
तगु न जिहवा तगु न अखी ॥
वेतगा आपे वतै ॥ वटि धागे अवरा घतै ॥
अंग - 471

ब्राह्मण तो मानसिक तौर पर अन्धा है, वह ज्ञानवान नहीं है बल्कि पैसों का लालची है, पैसे लेकर, धागे बनाकर लोगों के गले में डालता रहता है और पैसे लेकर लोगों के विवाह करवा देता है। वह स्वयं तो अनेकों प्रकार की भूल भुलइयों में फँसा हुआ है लेकिन लोगों को मार्ग बताता है। सबसे बड़ी हैरानी की बात भी यही है -

लै भाड़ि करे वीआहु ॥ कढि कागलु दसे राहु ॥
सुणि वेखहु लोका एहु विडाणु ॥ मनि अंधा नाउ सुजाणु॥ अंग - 471

श्री गुरू नानक देव जी ने इस प्रकार के पाखण्ड की केवल आलोचना ही नहीं की बल्कि उन्होंने सच्चा मार्ग भी बतलाया है कि सच्चा जनेऊ तो दया, सन्तोष, ब्रह्मचर्य, सत्य आदि गुणों का धारण करना व परमात्मा का नाम सिमरन करना है -

नाइ मंनिऐ पति उपजै सालाही सचु सूतु ॥
दरगह अंदरि पाईऐ तगु न तूटसि पूत ॥
अंग - 471

प्रत्येक धर्म के धार्मिक चिन्हों को नैतिक व अध्यात्मिक जीवन जीने में सहायक चिन्ह समझ कर धारण करना है न कि केवल रस्म या मर्यादा की पूर्ति के लिए।

सूतक-पातक - हिन्दू समाज बुरी तरह से ब्राह्मणवाद के बिछाए जाल में जकड़ा हुआ था। परमात्मा की याद, नाम सिमरन, नैतिक गुण, सत्य, सन्तोष, दया, सेवा, परोपकार

आदि की अहमियत का ज्ञान न तो ब्राह्मण को ही था और न ही जनता को था। अनेक रस्मों में से सूतक एक ऐसी ही रस्म थी। बच्चा पैदा होने से दस-बारह दिनों तक ब्राह्मण उस घर का अन्न नहीं खाता था क्योंकि उस घर में प्रसूति होने के कारण प्रत्येक वस्तु अपवित्र हो गई समझी जाती थी। इसके बाद ब्राह्मण आता, चौंके में बैठकर भोजन ग्रहण करता और उस परिवार से दक्षिणा लेता, तब कहीं जाकर घर पवित्र होता था। गुरू जी ने दलील के माध्यम से इस अज्ञानता को दूर किया कि इस प्रकार से तो गोबर, लकड़ी, अनाज, पानी आदि सबके अन्दर कीटाणु हैं जो कि प्रत्येक समय नष्ट हो रहे हैं, इसलिए तो फिर प्रत्येक समय ही घर अपवित्र है। इस प्रकार तो तुम किस किस की प्रसूति को मानोगे -

जे करि सूतकु मंनीऐ सभ तै सूतकु होइ ॥
गोहे अतै लकड़ी अंदरि कीड़ा होइ ॥
जेते दाणे अंन के जीआ बाझु न कोइ ॥
पहिला पाणी जीउ है जितु हरिआ सभु कोइ ॥
सूतकु किउ करि रखीऐ सूतकु पवै रसोइ ॥
नानक सूतकु एव न उतरै गिआनु उतारे धोइ ॥
अंग - 472

गुरू जी के अनुसार सूतक तो महज एक भ्रम, वहम या पाखण्ड ही है। यह धर्म की क्रिया कैसे हो सकती है, मनुष्य का जन्म लेना और उसका मर जाना प्रभु जी के हुक्मानुसार ही है। सारा खाना-पीना उस परमात्मा की देन है और सब कुछ पवित्र है -

सभो सूतकु भरमु है दूजै लगै जाइ ॥
जंमणु मरणा हुकमु है भाणै आवै जाइ ॥
खाणा पीणा पवितु है दितोनु रिजकु संबाहि ॥
नानक जिन्ी गुरमुखि बुझिआ तिन्ा सूतकु नाहि ॥
अंग - 473

वास्तविक सूतक तो कर्मेन्द्रियों पर नियन्त्रण रखना है-

मन का सूतकु लोभु है जिहवा सूतकु कूड़ु ॥
अखी सूतकु वेखणा पर त्रिअ पर धन रुपु ॥
कंनी सूतकु कंनि पै लाइतबारी खाहि ॥
नानक हंसा आदमी बधे जम पुरि जाहि ॥
अंग - 472

श्राद्ध तथा दान - अपने पूर्वजों के लिए श्राद्ध करने तथा ब्राह्मणों आदि को दान देना तथा उनको भोजन खिलाना हिन्दू धर्म का एक अभिन्न अंग बन गया था और अब भी है। गुरू जी कहते हैं कि खून-पसीने की कमाई करने के बाद ही यदि कुछ उसमें दान किया जाए तभी वह दरगाह में स्वीकार्य होता है। पितरों के लिए किए गए ब्रह्म भोज उन्हें कोई भी सुख आराम नहीं पहुँचाते हैं बल्कि यदि यह दान नेक कमाई का न होकर चोरी के धन का हो तो पितरों को और मध्यस्थ रूपी ब्राह्मणों को, यानि कि दोनों को ही सच्ची दरगाह में चोरी के सामान के कारण की गई दलाली के कारण सजा भुगतनी पड़ेगी -

जे मोहाका घरु मुहै घरु मुहि पितरी देइ ॥
अगै वसतु सिञाणीऐ पितरी चोर करेइ ॥
वढीअहि हथ दलाल के मुसफी एह करेइ ॥
नानक अगै सो मिलै जि खटे घाले देइ ॥
अंग - 472

लीलाएँ तथा रासें - गुरू जी के समय कृष्ण लीला की रासें डालनी श्री कृष्ण तथा गोपियों के रूपों को धारण करके नाच करने, रासधारियों के धनोपार्जन का मुख्य धन्धा बना हुआ था। वर्तमान समय में भी वृन्दावन के मन्दिरों में रासधारियों की अनेकों टोलियाँ, सारा साल, रासों के माध्यम से अच्छा धन कमाती हैं। गुरू जी के अनुसार यह सब धर्म का अंग नहीं है। इस प्रकार से न तो परमात्मा ही प्रसन्न होता है और न ही किसी प्रकार की अध्यामिकता अथवा नैतिकता की प्राप्ति होती है।

वाईन चेले नचनि गुर ॥ पैर हलाईन फेरन्हि सिर ॥ उडि उडि रावा झाटै पाइ ॥ वेखै लोकु हसै घरि जाइ ॥ रोटीआ कारणि पूरहि ताल ॥ आपु पछाड़हि धरती नालि ॥ गावनि गोपीआ गावनि कान्ह ॥ गावनि सीता राजे राम ॥ अंग - 465

नानक निरभउ निरंकारु होरि केते राम रवाल ॥ केतीआ कंन्ह कहाणीआ केते बेद बीचार ॥ केते नचहि मंगते गिड़ि मुड़ि पूरहि ताल ॥ बाजारी बाजार महि आइ कढहि बाजार ॥ गावहि राजे राणीआ बोलहि आल पताल ॥ लख टकिआ के मुंदड़े लख टकिआ के हार ॥ जितु तनि पाईअहि नानका से तन होवहि छार ॥ गिआनु न गलीं ढूढीऐ कथना करड़ा सारु ॥ करमि मिलै ता पाईऐ होर हिकमति हुकमु खुआरु॥ अंग - 465

'चलता'

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल', एम. ए., एम. फिल.

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मार्च, पृष्ठ - 54)

इच्छामुक्त होना

जीवन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है अन्दर की स्थाई शान्ति। शान्ति के बिना जीवन अधूरा है। वैसे शान्ति तो सब कुछ करते हुए भी प्राप्त हो सकती है लेकिन हम में से अधिकांश लोग अपनी दैनिक जीवन की सांसारिक प्राप्तियों में ही खोए रहते हैं और आन्तरिक स्थिरता की उन्हें कोई होश ही नहीं रहती है। यही कारण है कि हमारी शक्ति, साधन व सम्भावनाएँ समाप्त हो जाती हैं और हम उनका प्रयोग ही नहीं कर पाते हैं। इस प्रकार से हमें जीवन-मनोरथ का पता ही नहीं लगता है। हम तो प्रत्येक समय सांसारिक वस्तुओं के साथ जुड़े रहते हैं और अपने अन्दर को भूले रहते हैं। शान्ति प्राप्त करने के लिए, स्थिरता करने के लिए यह आवश्यक नहीं कि हम कोई नवीन प्राप्ति करें। आवश्यकता तो इस बात कि है कि हम स्वयं को उस सब कुछ से अलग करें जो कि हमारा है ही नहीं।

यह स्थिरता व शान्ति प्राप्त करने के लिए हमें इच्छा मुक्ति की अवस्था प्राप्त करनी पड़ेगी। वास्तव में इच्छा, जीवन में प्रेरणा की श्रोत है, जड़ है। इसलिए इच्छा को देखना व जानना बहुत आवश्यक है। साधारण तौर पर हम इच्छा पूर्ति की ही कोशिश करते हैं। हम इच्छा की वास्तविकता को जानने की कोशिश ही नहीं करते हैं। मानसिक शान्ति व मानसिक स्थिरता की प्राप्ति केवल तभी हो सकती है, जब हम इच्छाओं की पूर्ति का त्याग ही कर दें। यदि हम चुप करके, बैठकर सोचें और अपने अन्दर विश्लेषण करें तो हमें पता चलेगा कि वास्तव में बहुत थोड़ी सी इच्छाओं को अच्छी तरह से समझ लेना और मुख्य इच्छा को समझ कर उसे शक्तिशाली करना ही जीवन मनोरथ है। इसके साथ ही ज्ञानवान होना, स्थिर होना, आनन्द की स्थिति को प्राप्त करना व सारे दुखों से छुटकारा पाकर, सारे बन्धनों से मुक्त होना ही जीवन मनोरथ है।

मैडिटेशन करने का तात्पर्य है उस स्थिति को प्राप्त करना या उस गहराई व उस ऊँचाई पर पहुँचना जहाँ पर कि कोई इच्छा ही न हो। जब तक हमारे अन्दर इच्छाएँ हैं, तब तक हम जीवन की गराइयों व ऊँचाइयों को प्राप्त ही नहीं कर सकते हैं। मैंने कभी भी किसी ऐसे व्यक्ति को शान्त या खुश नहीं देखा है कि जिसके अन्दर इच्छाएँ हों और वे पूरी न हुई हों। मैडिटेशन करके शान्ति प्राप्त होती है, खुशी प्राप्त होती है, आनन्द की प्राप्ति होती है। मैडिटेशन करके समस्त दुखों से छुटकारा मिलता है और उच्च ज्ञान का अनुभव होता है। इस सब कुछ की प्राप्ति, इच्छा मुक्त होकर ही होती है। वास्तव में मैडिटेशन शुरू ही उस समय होती है जिस समय कि हम इच्छामुक्त हो जाते हैं। इससे पहले जो कुछ भी है मैडिटेशन तक पहुँचने की सीढ़ी ही है।

एक बार मैं बहुत अधिक निराश हो गया क्योंकि मुझे मैडिटेशन में कुछ भी प्राप्ति दिखाई नहीं पड़ रही थी और मैं तो परमात्मा का दर्शन चाहता था। अतः मैं अपने गुरुदेव के पास गया और उनसे कहा कि यदि आपने सचमुच ही कुछ प्राप्त किया है तो आप मुझे परमात्मा के दर्शन करवाओ। आपके पास रहकर, आपका शिष्य बनने का मुझे क्या लाभ है, जब आप मुझे परमात्मा के दर्शन ही नहीं करवा सकते हैं? गुरुदेव बोले, मैं तुमसे यह वादा करता हूँ कि कल सुबह मैं तुम्हें परमात्मा के दर्शन करवा दूँगा। वास्तव में मैं अपनी क्रिया, कर्म व मैडिटेशन आदि सब कुछ करने में पूरी तरह से समय का पाबन्द रहा हूँ लेकिन गुरुदेव जी से बात करने के बाद मैंने कहा, अब मैडिटेशन का क्या लाभ है? क्योंकि कल सुबह तो मैंने परमात्मा के दर्शन कर ही लेने हैं। मैं इतना

अधिक उत्सुक हो गया कि मैं सारी रात सोया ही नहीं। प्रात:काल में जब मैं गुरुदेव के पास गया तो वे पूछने लगे, क्यों भाई! तुम्हारी रात किस प्रकार से व्यतीत हुई? मैंने उत्तर दिया, गुरुदेव! मैं तो बहुत अधिक बेचैन रहा। वे कहने लगे, तुम परमात्मा को मिलने के लिए इतने बेचैन हो कि सारी रात सो ही नहीं सके। तुम परमात्मा के दर्शन किस प्रकार से कर सकोगे जबकि तुम्हारा मन शान्त ही नहीं है?

मैंने पूछा, क्या आप इस परिस्थिति में भी मुझे परमात्मा के दर्शन करवाओगे?

गुरुदेव बोले, हाँ, मैंने जो वादा किया था मैं उसे अवश्य ही पूरा करूँगा। क्या तुम मुझे बतलाओगे कि तुम किस प्रकार का परमात्मा देखना चाहते हो? मैं इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सका। भले ही मैंने परमात्मा के स्वरूप के बारे में बहुत सारे ग्रन्थों का अध्ययन किया है लेकिन मैं अपने गुरुदेव को कोई उत्तर नहीं दे सका। कई लोग कहते हैं कि परमात्मा अमूर्ति है, कई कहते हैं कि उसका कोई विशेष रूप है, कोई कहता है कि वह सर्वव्यापक है। अन्त में, मैंने उन्हें पुरातन समय का एक श्लोक सुनाया। मैंने कहा कि मैं पूर्ण शान्ति, पूर्ण खुशी व पूर्णानन्द चाहता हूँ। वे कहने लगे यह सब कुछ तो तुम्हारे अन्दर ही विद्यमान है जबकि तुम इस सब कुछ को बाहर के संसार में या बाहर के जीवन में ढूंढ रहे हो। तुम तो परमात्मा को बाहर ढूंढ रहे हो यानि कि तुम तो उसकी तलाश गलत जगह व गलत दिशा में कर रहे हो। इस प्रकार से हमारी इच्छाएँ, यहाँ तक कि परमात्मा को देखने की इच्छा भी, हमें उसकी प्राप्ति या ज्ञान की प्राप्ति से वंचित कर देती है।

प्यार तथा मोह से मुक्ति

दरअस्ल हम अपनी इच्छाओं को समझते ही नहीं हैं, उन्हें नियन्त्रित ही नहीं करते हैं, यही कारण है कि हम जानते ही नहीं हैं कि प्यार क्या है? वास्तविकता तो यह है कि मोह रहित हुए बिना प्यार हो ही नहीं सकता है। प्यार उसी अवस्था में जागृत होता है जब हम मोह से मुक्त होकर शक्तिशाली हो जाते हैं। उसके बाद चाहे सारे संसार की वस्तुएँ हमारे पास हों लेकिन फिर उनके प्रति हमारा रुख व आकर्षण बदल जाता है। फिर हमें इस बात का ज्ञान हो जाता है कि यह सब कुछ हमें प्रयोग में लाने के लिए प्राप्त हुआ है, हम इसके मालिक नहीं हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने कर्तव्यों का निर्वाह सुव्यवस्थित रूप से करें और स्वार्थहीन होकर करें। हमें यह समझ लेना चाहिए कि संसार की सारी वस्तुएँ हमारे लिए हैं और हमें इनका प्रयोग साधन की तरह से करना चाहिए न कि साध्य की तरह। हम इनके स्वामी नहीं हैं। इन वस्तुओं के साथ मोह करने से ये हमारी उच्च प्राप्ति में बाधक बन जाती हैं। वास्तविकता तो यह है कि हमें ज्ञान प्राप्ति के लिए, जागृति के लिए, किसी भी बाहर की चीज की जरूरत ही नहीं है। बाहर की सारी चीजें हमारे प्रयोग के लिए तो हैं लेकिन हमारा इनके ऊपर स्वामित्व नहीं है।

आवश्यकता इस बात की है कि हम सदैव ही सत्य के साथ जुड़े रहें। सत्य के साथ जुड़ना ही वास्तव में ज्ञान है और चेतन न होना अज्ञानता है, बेसमझी है। वास्तव में सारी परेशानियाँ, सारी मानसिक वेदनाएँ तथा सारी वे समस्याएँ जो तुम्हारे सामने आती हैं, वे सब इसीलिए हैं क्योंकि तुम अन्दर के सत्य के साथ जुड़े हुए ही नहीं हो। क्या तुम अपने अन्दर की खोज के लिए चेतन हो? यदि तुम अपने अन्दर के केन्द्र को जानते या समझते ही नहीं हो, तो तुम्हारा सारा जीवन उसी की तलाश में समाप्त हो जाएगा और परमात्मा की प्राप्ति फिर भी नहीं हो पाएगी। आन्तरिक प्राप्ति के लिए तुम्हें जरा सा भी आलस्य नहीं करना चाहिए। आज तुम इसी समय, इसी जगह चेतन होकर शान्त होओ क्योंकि यही तो जीवन मनोरथ है और तुम इसे अवश्य ही प्राप्त कर सकते हो। परेशानी तो इस बात की है कि हमने तो इस प्रकार का अपना स्वभाव ही नहीं बनाया है कि हम अपने वर्तमान में ही विचरण करें। हम या तो अपने भूतकाल के बारे में सोचते रहते हैं या फिर भविष्य की योजनाओं और ख्यालों में खोए रहते हैं। अत: कोशिश करो, इस पल में, इस घड़ी में जीने की। प्रत्येक पल खुशियों से भरपूर है, प्रत्येक पल निराला है, अनोखा है और जीवन से भरपूर है। फूल जैसे जीवन को खिलने दो, महकने दो। यदि तुम अब यहाँ पर मौजूद हो यानि कि वर्तमान में हो तो फिर मैडिटेशन में कोई समय नहीं लगता है, वही मैडिटेशन बन जाती है। मैडिटेशन में कोई भी भूत, वर्तमान या भविष्यकाल नहीं होता है। वास्तव में मन तो प्रत्येक समय काल, कारण व आकाश के साथ ही जुड़ा रहता है जबकि मैडिटेशन जो है, वह उन्हीं कारणों से मुक्त होना है यानि मन को इन्हीं कारणों से मुक्त करना है।

'चलता'

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब

(12.00 बजे से 4.00 बजे तक)

पूर्णमाशी - 19 अप्रैल, दिन शुक्रवार।

(रात्रि 07.00 बजे से 10.00 बजे तक)

संक्रान्ति - चेति, 14 अप्रैल, दिन रविवार।

(प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में सुबह 11.00 बजे होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)

You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh

Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1

Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13

Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib

Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine
S/B A/C No. 12861000000003 **RTGS/IFSC Code - PSIB0021286**
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 **RTGS/IFSC Code - PSIB0021286**
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank **SB A/C No. 0779000100179603**
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 **Branch Code - 077900, Swift Code - PUNBINBBMOH**

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 $
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address..

....

..............Pin Code............. Phone .... E-mail :..........................

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. जे.पी.आई. अस्पताल मोहाली के डाक्टर	आँखों के विशेषज्ञ	मंगलवार
7. डा. जतिन्दर सिंह तथा डा. कोमलप्रीत कौर	दाँतों के विशेषज्ञ	मंगलवार
8. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
9. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	बुद्धवार
10. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	बुद्धवार
11. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
12. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
13. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
14. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
15. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	रविवार
16. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
17. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार
18. बीबी वरश प्रभा	फिजियोथैरैपिस्ट	सोमवार तथा शुक्रवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं –

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की – सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए – भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए – भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए – भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति – भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाऐ सुख सहज सेती घरि आउ।।

बाबा सतनाम सिंह जी, बेकरसफील्ड, कैलेफोर्निया में डा. परमवीर सिंह राहल जी के गृह में श्री अखण्ड पाठ साहिब जी के भोग के उपरान्त कीर्तन की हाजिरी भरते हुए। आपके साथ में हैं, जत्थे समेत सन्त बाबा हरपाल सिंह जी, रतवाड़ा साहिब वाले ।

बाबा सतनाम सिंह जी (यू.एस.ए.)

गुरू घर के निष्काम सेवक, कीर्तनकार तथा महापुरुषों की संगत करने वाले बाबा सतनाम सिंह जी अटवाल बेकरसफील्ड कैलेफोर्निया में 23-02-2019 को प्रेमीजनों के निवास पर कीर्तन करते हुए अचानक बिछोड़ा दे गए और गुरू चरणों में जा बिराजे। सन् 1995 ई. में आपको श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी रतवाड़ा साहिब वालों की संगत प्राप्त हुई। अपने इलाके, दाना मण्डी, बहिराम नगर (दोआबा) में आपने बड़े-बड़े गुरमति समागम करवा कर हजारों भूले भटके लोगों को गुरू घर के साथ जोड़ा। महापुरुषों के द्वारा आपने नाम स्मरण की युक्ति प्राप्त की तथा महापुरुषों ने आपकी ड्यूटी लगाई कि प्रत्येक रविवार को आप स्वयं वाहिगुरू मन्त्र का जप किया करो तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी जप करवाया करो। आप जी ने उसी समय से, बिना किसी रुकावट के, इस नियम का पालन अपने घर पर किया यानि कि इस रीति को चलाया तथा हजारों अन्य श्रद्धालुजनों को भी इस युक्ति के माध्यम से जोड़ा। रतवाड़ा साहिब द्वारा प्रकाशित 'आत्म मार्ग' रूहानी पत्रिका का प्रचार आप पूरी तनदेही के साथ जीवन पर्यन्त करते रहे। प्रत्येक वर्ष रतवाड़ा साहिब में आयोजित होने वाले वार्षिक गुरमति समागम के अवसर पर आप अमेरिका के श्रद्धालुजनों के साथ रतवाड़ा साहिब में नतमस्तक होने के लिए निरन्तर (प्रत्येक वर्ष) आते रहे। आप जी का जन्म सन् 1953 ई. में नगर बहिराम में हुआ था और वाहिगुरू जी द्वारा प्रदत्त 66 वर्ष की आयु को भोगकर यानि कि अपने श्वासों की पूँजी को भोगकर तथा अपने पीछे एक हँसते-खेलते परिवार को छोड़कर, हम सबको सदा के लिए अलविदा कह गए।

विश्व गुरमति रूहानी मिशन के संस्थापक महापुरुषों के बहुत बड़े रूहानी परिवार के गुरुमुख प्यारे का बिछोड़ा असहनीय है। उनके नमित्त रखवाए गए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के सहज पाठ के भोग, गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में दिनाँक 03-03-2019 को डाले गए। इस अवसर पर रतवाड़ा साहिब की संगत द्वारा आप जी को भाव-भीनी श्रद्धांजलि भेंट की गई।

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी 'सिक्ख गुरुद्वारा सैनहोजे' में श्री सहज पाठ जी के भोग के उपरान्त वचन करते हुए।

इसी प्रकार से अमेरिका में आपके निवास स्थान पर आपके परिवार द्वारा रखवाए गए सहज पाठ के भोग 'सिक्ख गुरुद्वारा सैनहोजे' में दिनाँक 03-03-2019 को डाले गए। इस शोक अवसर पर आपके सगे-सम्बन्धियों, परिवार के सदस्यों, रतवाड़ा साहिब के साथ प्रेमपूर्वक जुड़े हुए श्रद्धालुजनों ने अमेरिका, कनाडा व इंग्लैंड से पहुँचकर आपको हार्दिक श्रद्धांजलि दी। गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब से सन्त बाबा हरपाल सिंह जी, जो कि अपनी अमेरिका प्रचार फेरी के दौरान, जत्थे समेत पहले ही पहुँचे हुए थे, ने संगत को सांत्वना प्रदान करते हुए परिवार को परमात्मा की रजा में राजी रहने की प्रेरणा की तथा आप उनकी अन्तिम अरदास में शामिल हुए।

बाबा सतनाम सिंह जी के नमित्त अमेरिका में रखे गए श्री सहज पाठ के भोग के उपरान्त सजे हुए दीवान में, गुरू प्यार में जुड़ी हुई संगत।

गुरसिखा मनि वाधाईआ ....।।

कलम के धनी, प्यार के सागर व आत्म मार्ग मैगजीन के संचालक श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी आत्म मार्ग कार्यालय में, जो कि रतवाड़ा साहिब में स्थित है, मैगजीन के लिए अनुभवी प्रवचन लिखते हुए।

'आत्म मार्ग' का प्रस्तुत अंक यानि कि अप्रैल 2019 का अंक प्रकाशित होने पर पच्चीसवें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। समस्त श्रद्धालुजन, पाठकगण व जिज्ञासुजन मुबारकबाद के पात्र हैं।

यह रूहानी गुलदस्ता आप जी को रूहानियत का प्रकाश करता हुआ, आप जी के मन के अन्धकार को विगत चौबीस वर्षों से प्रकाशित कर रहा है।

ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के संस्थापक महापुरुषों (ब्रह्मलीन श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी) की सोच व उनके द्वारा दर्शाए गए गुरमति मार्ग पर चलते हुए, आत्म मार्ग संस्था इस बात के लिए प्रतिक्षण प्रतिबद्ध है कि आप जी के पास यह रूहानी खुराक निरन्तर पहुँचती रहे, इसलिए आपसे यह सविनम्र अनुरोध है कि विगत चौबीस वर्षों से साथ निभा रहे पाठकगण इसकी लाइफ मैंबरशिप को रिन्यु (पुनर्नवीनीकरण) करवा कर आत्म मार्ग के पथिक बने रहने का सौभाग्य प्राप्त करें। आओ! अन्य, नए वार्षिक व आजीवन सदस्यों को बनाकर, उन्हें भी इस मार्ग पर आगे बढ़ाने के प्रयास करें। हम सबके द्वारा किए गए ये प्रयास एक महान सेवा होगी।

आत्म मार्ग संस्था, रतवाड़ा साहिब

नोटः कोई भी धनराशि भेजने के लिए आवश्यक ब्यौरा, खाता संख्या विवरण आदि इस पत्रिका के अन्तिम पृष्ठ पर उपलब्ध है।